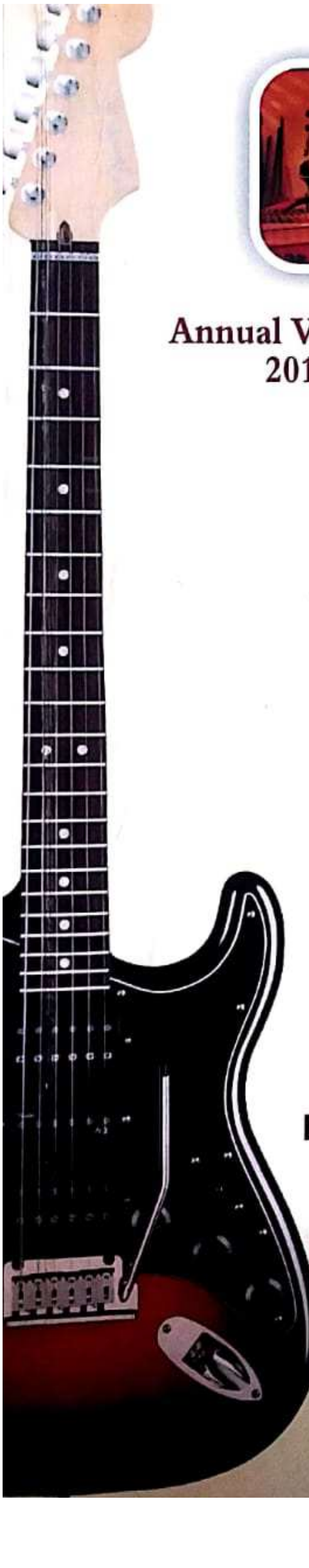Annual Volume No.-7
2018–2019

ISSN 2278-5256 Kala Drishti

Kala Drishti

A Peer Reviewed National Research Journal of
Music, Art & Literature

Chief Editor
Dr. Vandana Khushalani
Advisor

Editor
Dr. Monali J. Masih
Asst.Professor

Published By :
DEPARTMENT OF MUSIC
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya
Jaripatka, Nagpur-440 014.
Ph.: 0712-2631350, E-mail : aryawani.ngp@gmail.com

ISSN 2278 - 5256

Kala Drishti

Volume - 7

Year 2018 - 19

Chief Editor : **Dr. Vandana Khushalani**
Advisor
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya, Nagpur.

Editor : **Dr. Monali J. Masih**
Assistant Professor
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya, Nagpur.

Sub-Editors : **Prof. Anita Sharma (HOD)**
Assistant Professor
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya, Nagpur.

Prof. Varsha Agarkar
Assistant Professor
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya, Nagpur.

-:: Advisory Board :: -

Dr. Aparna Agnihotri
H.O.D. - Music Department
Vasantrao Naik Institute of Arts
& Soc. Sci., Nagpur.

Dr. Nilima Chapekar
H.O.D. - Music (Retd.)
Devi Ahilya Vishwavidyalaya,
Indore. (MP)

Dr. Snehashish Das
H.O.D. (Music),
Mahila Mahavidyalaya, Amravati.
Chairman (B.O.S.) Sant Gadgebaba
Amravati University.

Prof. Jiwankumar Masih
H.O.D. (Retd.)of English
Nabira Mahavidyalaya,
Katol.

Dr. Sunilkumar Navin
Associate Professor in English
Nabira Mahavidyalaya, Katol.

Dr. Deepak Kumar Mittal
Assistant Professor,
(Zoology) (Ph.D in Music)
Shri Satya Sai University of Technology
& Medical Sciences, Bhopal.

- Subscription -
Institutional ₹ **1000/-** (Annual)
Individual ₹ **700/-** (Annual)

-:: Published By ::-
DEPARTMENT OF MUSIC
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya,
Jaripatka, Nagpur - 440 014.
Ph. : 0712-2631350
E-mail : aryawani.ngp@gmail.com

ISSN 2278 - 5256

Kala Drishti

Volume - 7 **Year 2018 - 19**

Published By : **DEPARTMENT OF MUSIC**
Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya,
Jaripatka, Nagpur - 440 014.
Ph. : 0712-2631350
E-mail : aryawani.ngp@gmail.com

Advertisement :

Full Page Colour	-	**₹ 2500/-**
Full Page B/W	-	**₹ 1200/-**
Half Page B/W	-	**₹ 600/-**

Subscription :

Institutional **₹ 1000/-** (Annual)
Individual **₹ 700/-** (Annual)

DD / Cheques should be sent in favour of
"The Principal, Dayanand Arya Kanya Mahavidyalaya,
Jaripatka, Nagpur(MS).

DISCLAIMER

The articles and other material that have been published in this issue do not reflect the views and ideas of the editors. The contributors are solely responsible for the views expressed and the material they have quoted in their articles.

ISSN 2278 - 5256

अनुक्रम

१)	कला में सृजनशीलता	– डॉ. वंदना खुशालानी नागपुर	१
२)	सम्पादकीय....	– डॉ. मोनाली मसीह नागपुर	२
३)	उत्तराखण्ड की जागर गायिका श्रीमती बसंती देवी बिष्ट	– प्रा. अनिता शर्मा नागपुर	३–५
४)	आधुनिक तकनीक एवं संगीत शिक्षा	– प्रा. वर्षा आगरकर नागपुर	६–७
५)	बंदिश रचना तथा सुगम गीत रचना: एक विवेचन	– प्रा. गिरीष चंद्रिकापुरे नागपुर	८–१०
६)	संगीत में भाषा का महत्व	– प्रो. नवीन खांडेकर नागपुर	११–१२
७)	''आज से पहले संगीत क्या था? मेरी दृष्टि में''	– डॉ. शिप्रा सरकार नागपुर	१३–१४
८)	Sangeet Galaxy Journal: An Initiative to Online Publication	– Dr. Amit Verma Nagpur	१५–१६
९)	वैश्वीकरण में संगीत की भूमिका	– डॉ. प्रमोद रेवतकर चंद्रपुर	१७–१९
१०)	दैनंदिन संगीत – लोकसंगीत की छटा	– डॉ. श्वेता दी. वेगड भंडारा	२०–२६
११)	दृक संवाद आणि दृक विचारप्रसारणचा आशय आकलन करणारी दृकभाषा–एक अभ्यास	– डॉ. मोहिते नागपुर	२७–३४
१२)	संगीत एक प्रयोगात्मक कला	– डॉ. वैखरीमंगेश वझलवार नागपुर	३५–३७
13)	सूफी मत एवं संगीत : उद्‌भव और विकास	– डॉ. सुनील कुमार तिवारी भागलपुर	३८–४४
14)	इंग्लीश विंग्लीश : एक अध्ययन	– प्रा.संयुक्ता थोरात नागपुर	४५–४७

ISSN 2278 - 5256

आर्य विद्या सभा

श्री अशोक कृपालानी
अध्यक्ष

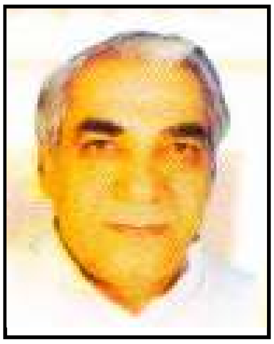

श्री घनश्यामदास कुकरेजा
उपाध्यक्ष

श्रीमती दीपा लालवानी
सचिव

श्री वेदप्रकाश वाधवानी
सहसचिव

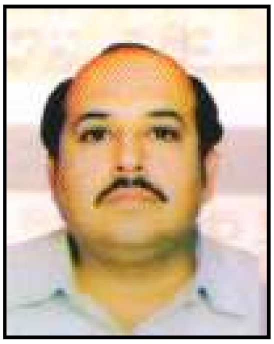

श्री भूषण खूबचंदानी
कोषाध्यक्ष

श्री दयाराम केवलरामानी
सदस्य

डॉ. अभिमन्यु कुकरेजा
सदस्य

श्री लालचंद लखवानी
सदस्य

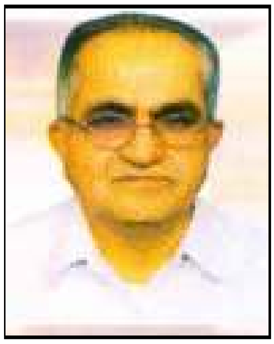

श्री करमचंद केवलरामानी
सदस्य

डॉ. वंदना खुशालानी
सल्लाहगार
दयानंद आर्य कन्या महाविद्यालय,
जरीपटका, नागपुर.

कला में सृजनशीलता

सदैव उर्वर बनाकर रखेगी। निस्संदेह यह सही है कि जो संगीत कला थी, वह समय, स्थान व परिवेश की दृष्टि से बदलेगी, हू–ब–हू वैसी न रहकर आनेवाले समय में जरूर बदलेगी पर उसका उत्सव मानो मूल प्रकृति व उनका प्रसार सही दिशा में रहा तो वह अपनी परंपरा से विभिन्न नहीं होगा। किसी भी कला में वाचन की वजह से खुलापन तो ठीक है पर इस तर्क के आधार पर उसकी गहराई नहीं छोड़नी चाहिये। संगीत का इतिहास लिखने वाला छात्र इसे नए व पुराने संगीत के खांचे में बांट सकता है पर यह दावा नहीं कर सकता कि नई पीढ़ी के लिये पुराना यानी शास्त्रीय या राग आधारित संगीत अबूझ है और बेमानी है। निश्चित ही जरूरत व परिवेश के हिसाब से सुरक्षित बदल रहा है, कला तभी जीवंत रहती है जब अपने आप में परिवर्तन करती रहती है, इन बदलावों में संगीत की वैश्विक संवेदना खत्म नहीं होनी चाहिए। मेरी दृष्टि में सूचना प्रौद्योगिकी, भूमंडलीकरण तथा उपभोक्तावादी संस्कृति के बीच में भी टिकेगी जिसमें सहजता होगी, केवल ट्रेंडी वही होने की वजह से कुछ कोई शैली चर्चित हो जाए आकर्षित कर ले, बेस्ट सेलर भी बन जाए किंतु जिस प्रकार आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कभी मानव मस्तिष्क की बराबरी नहीं कर सकता, उसी प्रकार यह फैशनेबल संगीत मौलिक संगीत की जगह कभी नहीं ले सकता। यह संगीत का सिर्फ एक कोना है जो मनोरंजन तो कर सकता है पर आशा–निराशा, सुख–दुख, हंसी–भ्रम को भीतर तक महसूस नही कर सकता है, जगत के साथ समरसता, चेतन का चैतन्य के साथ सामंजस्य नही करा सकता ।

सम्पादकीय.......

डॉ. मोनाली मसीह
असिस्टंट प्रोफेसर
दयानंद आर्य कन्या महाविद्यालय,
जरीपटका, नागपुर.
monalimasih@gmail.com

निश्चित ही हमारे लिए यह आनंद का क्षण है कि कला दृष्टि का सातवा अंक प्रकाशित होने जा रहा है। किंतु खेद भी है कि जो पिछले साल U.G.C. recognized था उस सूची से निकल गया है, किंतु हमारा विश्वास है कि यदि आप सबकी दुआएँ और शुभकामनाएँ होंगी तो एक बार U.G.C. List में हमारी कला दृष्टि का नाम फिर से आएगा इसकी पूरी कोशिश चल रही है।

आप सब से खास तौर पर निवेदन है कि आप जो भी लेख सामग्री भेजते हैं उनका स्तर U.G.C. को मान्य हो ताकि फिर से हम हमारा वो स्थान U.G.C. में हासिल कर सकें। इसकी दक्षता आप सभी लें ऐसी गुजारिश है। आप सभी पाठकों के प्रति अध्यापक वर्ग के प्रति मै कृतज्ञता व्यक्त करती हूं कि बड़े ही उत्साह के साथ आपने अपने प्रपत्र भेजें। इन प्रपत्रों द्वारा उनकी सृजनशीलता एवं चिंतनशीलता दिखाई देती है उनके लिखान से जो संदेश है वो भी समाज के प्रति उनकी जिम्मेदारी दर्शाता है। इन्हीं वैचारिक आदान–प्रदान के द्वारा व्यक्तित्व और भी निखर के आता है और निश्चित ही ज्ञानवृध्दि होती है। इसके द्वारा प्राध्यापक प्रभावशाली तो बनते ही हैं परंतु इसका लाभ उनके विद्यार्थियों को जरूर मिलता है।

एक सराहनीय बात है कि इस बार के प्रपत्रों में शुध्दलेखन पर सभी ने बारीकी से ध्यान दिया है संपादक मंडल को अधिक मशक्कत नहीं करनी पड़ी। आप सबको धन्यवाद और यही प्रेम हमेशा आप लोगों से मिलता रहेगा ऐसी आशा करती हूं। आप सभी के सहयोग के लिए मै शुक्रगुजार हूँ।

धन्यवाद।

उत्तराखण्ड की जागर गायिका श्रीमती बसंती देवी बिष्ट

प्रा. अनिता शर्मा
संगीत विभाग प्रमुख,
दयानंद आर्य कन्या महाविद्यालय,
जरीपटका, नागपुर.
anitasharma12@gmail.com

भारत की एक लोकगायिका है, जो उत्तराखण्ड राज्य के घर–घर में गाए जाने वाले माँ भगवती नंदा के जागरों के गायन के लिए प्रसिध्द है। उत्तराखण्ड में अनेक मौकों पर देवी–देवताओं की स्तुतियां जागर के जरिए की जाती है। इस परंपरा को जागर गायिका बसंती बिष्ट ने न सिर्फ आगे बढ़ाया बल्कि उन्होने पूरे भारत को उत्तराखण्ड की पारंपारिक लोक संस्कृति को संजोने के लिए उन्हे पद्मश्री सम्मान से नवाजा गया है।

जागर: देवभूमि होने के कारण यहां पर देवताओं की मान्यता काफी थी। ग्राम देवता अपना प्रभाव एकदम दिखाते थे। यह सतयुग ही था कि जंगलों के गाँव अपने ग्राम देवता के कारण सुरक्षित हुआ करते थे यह सत्य बात है जागरी दो लोग हुआ करते थे और अपने बोल डोटी से जागर किया करते थे। जागर मंदिर अथवा घर कही पर भी किया जाता है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रो मे देवताओं की स्तुति गान आज भी जागर के रूप मे किया जाता था पर्वतीय क्षेत्र के लोगों का आज भी जागर पर बड़ा विश्वास है– जैसे देवताओं का आहवान किया जाता है।

बचपन : बसंती बिष्ट का जन्म १९५३ मे जिला चमोली मे ल्वाणी गाँव मे हुआ था, उनकी माँ का नाम विरमा देवी था और माँ से ही बजंती बिस्ट ने जागर व मांगल गायन सीखा।

ऐसे हुई संगीत सीखने की शुरूआत : बसंती देवी पर देवताओं का बड़ा प्रभाव था। उनके पति ने उन्हें कई बार गुनगुनाते हुए सुना तो उनसे रहा नही गया और उन्होने विधिवत रूप से संगीत सीखने के लिए प्रोत्साहित किया। पहले तो बसंती बिष्ट तैयार नही हुए लेकिन पति के जोर देने पर उन्होने संगीत सीखने का फैसला किया। हारमोनियम संभाला और विधिवत रूप से सीखना प्रारम्भ कर दिया। बसंती बिष्ट जागर गाती और पति रणजीत सिंह हुड़का (पारंपारिक वाद्ययंत्र) बजाते। यही नही बसंती बिष्ट ने गढ़वाल और कुमांऊ के ग्रामीण इलाको मे गाए जाने वाले मांगलगीत, देवजागर, घटियाली, चौफुला आदि के संरक्षण के लिए पहाड़ के कलाकारों और जागर गायकों को सूचिबध्द करने का काम भी शुरू किया।

४० वर्ष की आयु में पहली बार मंच प्रदर्शन : पहली बार वह गढ़वाल सभा के मंच पर देहरादून के परेड ग्राउंड में पहुची तो जनसमूह को यकीन नही हुआ किन्तु जैसे ही अपनी मखमली आवाज से माँ नंदा देवी का आहवान किया तालियों की गड़गड़ाहट और प्रेम के आसूओं ने उन्हे ऊर्जा व उत्साह दिया जो आज भी उनमें कायम है। उन्हे खुशी है कि उत्तराखण्ड के लोक संगीत को राष्ट्रीय स्तर पर सराहा गया है। बसंती बिष्ट ने माँ नंदा के जागर को उन्होने स्वरचित पुस्तक 'नंदा के जागर सुफल हे जाया तुम्हारी जात्रा' मे संजोया है।

तोड़ा सदियो पुराना पुरूष परंपरा ये है आज के संघर्ष की कहानी : सदियो से पहाड़ मे जागर की परंपरा को पहले पुरूष लोग ही गाते थे। लेकिन समाज इतनी जल्दी बदलाव के लिए तैयार नही था किन्तु बसंती बिष्ट ने इन परंपरा को तोड़ा और प्रसिध्द जागर गायिका के रूप में प्रसिध्द हुई। जागर की दुनिया कई रहस्यो से भरी है। वेद, पुराण शास्त्र, नागों और पहाड़ की लोक परम्पराओं का बखान जागरो मे है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों मे देवताओं की स्तुति गान जागर के रूप मे किया जाता है।

माँ से प्रेरणा : माँ पर देवता की छाप होने के कारण

मात्र १३ साल की उम्र में बसन्ती बिष्ट की शादी चमोली जनपत के बीहड के सीमान्त गाँवल्याणी में हुई बसन्ती बिष्ट की मां जागर गाती थी व नाचती थी, इसलिए बचपन से ही बसंती बिस्ट भी जागरों को गुनगुनाने लग गयी थी, बसंती की आवाज में अलग सा आकर्षण देखने को मिलता था लेकिन चार घाम की सुरम्य वादियों में गुनगुनाने के अलावा, आवाज दबकर रह गयी। घरवालों ने बसंती की शादी कम उम्र में कर दी व शादी के बाद बसंती गाँव में ही रही, लेकिन सेवा में कार्यरत अपने पति के साथ कुछ सालों के बाद जालन्धर सेना छावनी चली गयी, वहां उनके पति ने बसंती बिष्ट की आवाज को धीरे–धीरे पहचानना शुरू किया व शास्त्रीय संगीत की शिक्षा दिलाने का फैसला किया।

देहादून वापसी : लगभग पाँच वर्षो तक शास्त्रीय संगीत सीखने के बाद वह देहरादून लौट आई, उस वक्त अलग राज्य आंदोलन अपने चरम सीमा पर था बसंती बिष्ट भी जनआन्दोलन में शामिल होने लगी इसी बीच बसंती बिष्ट ने जन आन्दोलन से जुडे गीतों को गाया तो जन समूह ने बसंती की आवाज को काफी सहारा हुआ।

जादुई आवाज : धीरे–धीरे बसंती बिष्ट की आवाज लोगों को आकर्षित करने लगी तथा इनके श्रोताओं की संख्या भी बढने लगी। इसी बीच बसंती बिष्ट ने आकाशवाणी में भी गाना शुरू किया।

उनके पति रणजीत सिंह बताते है कि बसंती का जीवन काफी संघर्षो भरा रहा है। ३२ वर्षो तक बसंती बिष्ट अपनी घर गृहस्थी में ही व्यस्थ रही लेकिन उसके बाद धीरे–धीरे जागर गायन के क्षेत्र में उनकी दिलचस्पी बढ़ती गयी, और उनको आगे का रास्ता दिखने लगा।

पुरूषों ने किया विरोध : जब बसंती बिष्ट के जागर आकाशवाणी से गूंजने लगे तो पुरूष प्रधान समाज ने इसका पुरजोर विरोध किया। क्योकि उस वक्त, घर की नारियों को घर पर ही रखा जाता था। जब बसंती बिष्ट ने मंचों से देवताओं के जागर गाना शुरू किया तो कुछ समाज के ठेकेदारों ने फिर विरोध करना शुरू कर दिया किन्तु बसंती बिष्ट ने अपनी रफ्तार नही छोडी। जागर देवभूमि में शास्त्रीय संगीत के रूप में जाना जाता है, जो अब धीरे–धीरे विलुप्त होता जा रहा है, देवभूमि पर्वतीय क्षेत्र में जागर गाने और इसकी जानकारी रखने वाले बहुत कम लोग रह गये है क्योकि गांव से लोगों का पलायन हो गया।

गायन ही नही शोध भी : बसंती बिष्ट ने ना सिर्फ जगारो को अपनी जादुई आवाज दी। बल्कि अब वह इस विद्या पर शोध भी करवा रही है, माँ नन्दा देवी पर जागरों को उन्होने एक किताब के रूप में संजोया है। बसंती बिष्ट कहती है कि देवभूमि के पर्वतीय क्षेत्र में आज अदृश्य शक्तियां (नागराजा/परियां/नरसींग/भूमिका अष्टवली देवता) विद्यमान है। जिन पर शोध चल रहा है। उत्तराखण्ड के पौड़ी उत्तरकाशी टिहरी, रूद्रप्रयाग, चमोली और कुमाऊ के कुछ जिलों में अछरिया परियों का वर्णन जगरों में मिलता है, उनका कहना है कि जागरण में आध्यात्म, वेद, पुराण शास्त्र सहित पहाड़ की लोक परमपरायें मान्यताओं की उल्लेख है।

अलग मुकाम : बसन्ती बिष्ट ने जागर गायन की दुनिया में अपना अलग स्थान हासिल कर लिया है, ये उनके श्रोताओं की ही देन है कि बसंती सिर्फ जागर ही नहीं पर्वतीय पारम्परिक वेशभूषा में मंचों पर आती है तो अपने देवभूमि पर्वतीय संस्कृति की झलग जीवित हो उठती है।

सम्मान : १. भारत सरकार ने २६ जनवरी २०१७ को उन्हे पद्मश्री से विभूषित किया है। यह पुरस्कार राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोंविद द्वारा दिया गया। यह सम्मान पाने वाली वह उत्तराखण्ड की एक मात्र शख्सियत है। यही नही जागर को दुनिया भर में पहचान दिलाने वाली बसंती बिष्ट नाम प्रदेश की पहली प्रोफेशनल महिला जागर गायिका होने का भी रिकार्ड है।

२. मध्य प्रदेश सरकार ने २०१६–१७ का राष्ट्रीय देवी अहिल्या सम्मान दिया गया है। भोपाल के

जनजातिय संग्रहालय में आयोजित समारोह में एमपी के संस्कृति विभाग द्वारा आयोजित कार्यक्रम में उन्हे ये सम्मान दिया गया उनकी प्रशस्ति मे एम पी सरकार द्वारा कहा गया है कि बसंती बिष्ट गंगा, यमुना के गीत गाने वाली विदुषी गायिका है जिनको सम्मान देना राज्य के लिए गौरव की बात है।

संदर्भ : इंटरनेट hi.m.wikipedia.

आधुनिक तकनीक एवं संगीत शिक्षा

प्रा. वर्षा आगरकर
असिस्टंट प्रोफेसर,
दयानंद आर्य कन्या महाविद्यालय,
जरीपटका, नागपुर.
12varshaagarkar@gmail.com

६४ कलाओं में सर्वश्रेष्ठ कला संगीत कला हमारी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने का उत्तम व श्रेष्ठ माध्यम है। आत्मा से परमात्मा तक मिलने का एकमेव साधन है संगीत। सहजानंद की स्थिति तक पहुंचने का साधन और अनन्य साधना की स्वरलहरी है संगीत। प्रकृति के कण कण में, सागर की लहरों में, वायु के स्पंदन इन सभी में संगीत समाया हुआ है।

परिवर्तन सृष्टि का अबाधित नियम है। जिस प्रकार सामाजिक, राजकीय, वैज्ञानिक क्षेत्रों में परिवर्तन आया है, उसी प्रकार संगीत क्षेत्र में भी अभूतपुर्व परिवर्तन हुआ है। लोकसंगीत, सुगम संगीत, ख्याल, टप्पा, ठुमरी, ध्रुपद आदि सभी विधाओं में भी परिवर्तन आये हैं। इन परिवर्तनों में वैज्ञानिक युग व तकनीकी साधनों की अहम् भूमिका रही है। पिछले १०–१५ सालों में वैज्ञानिक प्रगति इतनी बढ़ गई है कि देश की कला संस्कृति व संगीत आदि में संप्रेषण व शिक्षण को समृध्द, विकसित एवं विस्तारित रूप प्रदान करने हेतु अत्याधुनिक संचार माध्यम अति लोकप्रिय एवं लाभप्रद सिद्ध होते जा रहे हैं। तकनीकि इलेक्ट्रानिक माध्यमों तथा तकनीकि साधनों से संगीत कला अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय हुई है।

एक समय ऐसा था कि गायक् कलाकारों की आवाज दूर बैठे हुये अंतिम श्रोताओं तक न पहुँचने के कारण संगीत की महफिलें राजदरबारों एवं छोटे हॉल तक ही सीमित हुआ करती थीं। उसमें भी कलाकार को अपनी आवाज पर जोर लगानी पड़ती थी। जिस कारण कलाकारकी आवाज की मधुरता नष्ट हो जाया करती थी। तकनीकि माध्यम, कलाकार की आवाज को ज्यों का त्यों रखने में सहायक सिध्द हुये है। तथा श्रोता भी संगीत का आनंद उठा रहे हैं। वर्तमान युग डिजीटल एवं कम्प्यूटर युग है। इससे संगीत के अध्ययन–अध्यापन की प्रक्रिया में इलेक्ट्रॉनिक्स एवं I.C.T. का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। टेपरिकार्डर, ग्रामोफोन, सी.डी., इलेक्ट्रॉनिक वाद्य, ऑडिओ–वीडियो–शूटिंग आदि सभी माध्यमों की पूर्ति एक छोटे से एन्ड्राइड मोबाईल ने पूरी की है। संगीत सीखनेवालों को इंटरनेट माध्यम से इतनी सुविधायें प्राप्त हो रही हैं कि घर बैठे ही दूर दूर से गुरू शिष्य परम्परा के अंतर्गत शिक्षण प्रणाली का आदान–प्रदान किया जा रहा है। मोबाईल में स्काईप, व्हाट्सएॅप की सुविधाओं के कारण ऑनलाईन वीडियो–कॉलिंग संगीत शिक्षा के लिये निरन्तर उपयोग में लाई जा रही है। व्हाट्सऐप पर बड़े बड़े कलाकारों एवं संगीत प्रेमियों का ग्रुप बनाकर उसमें कार्यक्रम का वीडियो संबंधी जानकारियाँ डाली जा रही है। जिससे रसिक, नवोदित कलाकार एवं छात्र शिक्षा भी ग्रहण कर रहे है। २००७ में मोबाईल में फेसबुक की सुविधा प्राप्त हो गई। जिससे कलाकारों के साथ साथ सामान्य व्यक्ति भी अपनी प्रसिध्दि तथा व्हीडिओज़ के लिये फेसबुक का उपयोग करने लगे हैं। जबसे फेसबुक के पेज़ बनने लगा तबसे बड़े बड़े कलाकार संगीत–संस्था विद्यार्थी वर्ग, गुरूजन आदि ने अपने पेज निकाले। उससे यूजर्स की संख्या बढ़ गई। सभी अपनी अपनी गायन–वादन की कला शैलियों को प्रचार में लाने के लिए फेसबुक का उपयोग कर रहे हैं। इसके द्वारा कम समय व कम खर्च में कलाकारों को प्रसिध्दि व अर्थोपार्जन दोनों का लाभ मिलने लगा। व्हाट्सऐप की तरह फेसबुक में भी ग्रुप बनना शुरू सूचनायें आदि

शेयर होने लगी। जिसके कारण संगीत का प्रचार और तेजी से बढ़ने लगा। यूटयूब पर बड़े बड़े कलाकार अपने व्हीडियोज एवं संगीत संबंधी, शैक्षणिक जानकारियाँ अपलोड कर रहे है। जिसे सुनकर व देखकर युवा वर्ग शिक्षा ग्रहण कर रहे है। उसमें व्हीडिओज को बार बार सुनने के लिये 'सेव' करने की भी व्यवस्था है। अंतर्राष्ट्रीय ख्याती प्राप्त मोहन वीणावादक पं. विश्वमोहन भट्ट का कहना है कि पहले के समय में उन्हे केवल आकाशवाणी पर निर्भर रहना पडता था। सोशल मीडिया के कारण पल में हम लोग पूरी जग की यात्रा कर सकते हैं। यू–टयुब पर पंडितजी का 'हाऊ टू प्ले मोहनवीणा' इस शिक्षा विषयक कार्यक्रम से काफी लोग मोहनवीणा बजाना सीख चुके हैं। कभी कभी तो ऐसा होता है कि उनका प्रोग्राम खतम करके वह अपनी ठहरी हुई जगह पर भी पहुँच नहीं पाते और उसी कार्यक्रम का व्हिडिओ यु टयूब पर डाऊनलोड हो जाता है। यही तंत्र युग की देन है। पं. अजय चक्रवर्ती जी का 'श्रृतिवंदन', शंकर महादेवन का म्यूजिक अकादमी, सुरेश वाडकरजी का ''अजीवसन'' जैसी अनेक संस्थाएं संगीत की ऑनलाईन शिक्षा प्रदान कर रही है। कंम्प्यूटरीकृत प्रणाली में आज विविध प्रयोग के माध्यम से विविध प्रयोग हो रहे हैं। गानों की रिकार्डींग के वक्त रिकार्डींग, एडिटींग, मिक्सिंग आदि तकनीकों में विकास इतना अधिक बढ़ चुका है कि कई बार मेहनत से बचने के लिए, छोटे मोटे बदलाव के लिए, आवाज की बारिकियों, हरकतों को अधिक व्यवस्थित करने के लिए 'बनज चेंजम; के विकल्प की सहायता लेते है। इस प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि कलाकार अपनी मेहनत तल्लीनता से नहीं करते है। और जितना समय लगाना चाहिये उतना नहीं लगाते है। एक ही वाद्य में अनेक वाद्यों की आवाज निकलने के कारण मूल वाद्यकार बेरोजगार होते जा रहे हैं। वर्तमान समय में ऑडिओ, सी.डी. का उपयोग नही के बराबर हो रहा है। इसकी जगह पेन ड्राइव्ह व तत्सम तंत्रो ने ले ली है। और तो और गानो के म्यूजिक ट्रैक भी उपलब्ध हो गये हैं। जिसे 'कैराओके' कहते है। जिसके साथ विद्यार्थी वर्ग गायन करने लगे हैं। इस तरह संगीत क्षेत्र में नये नये तंत्र एवम् तांत्रिक उपकरणों से महान क्रांति आई है। तथा संगीत की हर विधा में इन उपकरणों के माध्यम से चार चाँद लग गये हैं। केवल आवश्यक है वाद्ययंत्रो की समझ व तंत्रज्ञान के बीच का संयोजन।

संदर्भ :–

संगीत विशारद – वसंत

भारतीय संगीत और वैश्विकरण – डॉ. आकांक्षी प्दजमतदमज

भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणो का प्रयोग – कनिष्ठ पब्लिशर्स

बंदिश रचना तथा सुगम गीत रचना: एक विवेचन

प्रा. गिरीष चंद्रिकापुरे
असिस्टंट प्रोफेसर
आर.एस. मुंडले धरमपेठ
महाविद्यालय, नागपुर.

इस शोध पत्र में संगीत रचना की दो विधाओं के विषय में विवेचन किया गया है। ख्याल की बंदिश तथा सुगम संगीत में गीत को धुन देना ये दो अलग अलग कुशलताएँ हैं तथा उनके विभिन्न पहलू भी हैं। इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर आगे विस्तार से आलोक डाला गया है।

बंदिश रचना : शास्त्रीय संगीत में जो राग – ताल युक्त कवित्त गाया जाता है, उसे बंदिश या चीज़ कहा जाता है। पुराने गायक इसे ही स्थायी या अनावधान से 'अस्थायी' या 'अस्ताई' कहा करते थे। बंदिश में शब्दों का स्थान अति गौण होता है। शब्दों से अभिव्यक्त होने वाली कविता भी संक्षिप्त तथा अति साधारण कोटि में आने वाली होती है। शास्त्रीय संगीत में स्वर तथा लय यही 'सुनी जानेवाली चीज़' होते हैं, इसीलिए काव्य को गौण स्थान प्राप्त होता है। ऐसे काव्य अतिसाधारण, साधारण अथवा अ–साधारण कोटि का हो, इससे फर्क नही पडता। उस कवित्त का अर्थ ध्यान में आए या न आए, इससे राग को कोई फर्क नही पडता। वैसे तो तराने भी बेझिझक गाये जाते हैं और श्रोताओं को आनंद की प्राप्ति भी होती है। तरानों में शब्द तो होते हैं, मगर अर्थ का अभाव रहता है।

इसका अर्थ यह कदापि नही कि रचनाकार ने ख्याल रचते समय अर्थ का विचार न किया हो। अगर किसी बंदिश के शब्दों का अर्थ हम न लगा पा रहे हों, तो कमी हम में है, न कि रचनाकार में। प्रादेशिक विविधताओं के कारण, कई शब्दों का हमसे वास्ता ही नही पडता है (उदा. 'ढूंढूँ बारे सैंया' में 'बारे'; 'मोरे मंदर अबलो नहि आये' में 'अबलो'), इसी कारण बंदिश का अर्थ लगाने में कई अडचनें आती हैं। परन्तु ऐसे वक्त हमें किसी भाषा/ बोली के जानकार व्यक्ति का सहारा लेना चाहिये, न कि अपने मन का कोई अर्थ गढ कर वक्त निकालना चाहिए। एक उदाहरण: 'गोकुल गाँव के छोरा, बरसाने की नार' मुलतानी राग के इस विलंबित ख्याल का अर्थ एक छात्रा ने 'गोकुल गाव के किनारे बरसात होनेवाली है' इस प्रकार बताया था। संभवत: उस छात्रा को भनक न होगी कि 'बरसाना' यह भी किसी गांव का नाम भी हो सकता है!

दूसरा उदाहरण मियां मल्हार का सुप्रसिद्ध विलंबित ख्याल 'करीम नाम तेरो' यह है। विद्यार्थीगण इसे 'करी मना' इस नाम से पुकारते हैं। शब्दों के अनुचित लगाव से इसीका विस्तृत रूप 'करी मना मतेरो, तूसा हेब सतार' हो जाता है। परंतु मियां मल्हार राग को कोई हानि नहीं होती। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ख्याल के शब्दों का अर्थ क्या है, शब्द सार्थक हैं या अर्थहीन, इससे राग का तो कुछ बिगडता नही है। किन्तु गायक ने अर्थ समझने का प्रयास अवश्य ही करना चाहिए व यथाशक्ति सही कवित्त श्रोताओं के सामने रखना चाहिए, तभी सहृदय श्रोताओं के मन में वह गायक सही जगह प्राप्त कर पाएगा। तात्पर्य यह कि, बंदिश में कविता का स्थान स्वर तथा लय के मुकाबले गौण होता है। रचनाकार को अभिप्रेत राग का स्वरूप; ताल में वह रचना किस गति से, कहाँ से विराम लेते हुए किस प्रकार आती है, यह सब बातें बंदिश में महत्त्वपूर्ण होती हैं। बंदिश निर्मिति की प्रक्रिया के सन्दर्भ में शास्त्रों में 'वाग्गेयकार' यह एक संज्ञा प्राप्त होती है, जिसका अर्थ होता है – गीत का

काव्य (धातु) एवं संगीत (मातु) इन दोनों पक्षों का निर्माणकर्ता। बंदिश निर्मिति के समय स्वर तथा लय–ताल के साथ ही कविता का स्फुरण होता है, ऐसा भी एक मत है। बंदिश निर्मिति की प्रक्रिया कई प्रकार की हो सकती है, उदा. १) बंदिश के शब्द, स्वरमय होकर ही मन में आए, बाद में उन्हें ताल में बिठाना पडे, ये सम्भव है।

२) बंदिश के शब्द तालाकृति में ही सूझे, राग तथा स्वर का विचार उसके तुरंत बाद ही मन में आए, यह भी हो सकता है।

३) राग में कोई नयी/आकर्षक/अलग स्वरसंगति सूझे, और उसे तुरंत ही कोई शब्द/शब्दसमूह तालबद्ध होकर मुखडा बन जाए – तथा बंदिश दो–तीन दिन में पूरी हो जाए – इस प्रकार भी बंदिश बन सकती है। इसके अलावा अन्य भी कई प्रकार हो सकते हैं, मगर यह कदापि नही हो सकता है कि किसी अन्य कवि की रचना को आप राग में बंदिश की तरह कम्पोज कर रहे हों। उसे गाया जा सकता है, अच्छा भी लग सकता है मगर उसे बंदिश नहीं कहा जाएगा। ऐसा भी नहीं हो सकता है कि आज आपने कवित्त लिख डाला, दो महीने के बाद आप उसको राग–ताल में ढालेंगे! वो भी कम्पोजिंग का ही एक प्रकार होगा, उसे बंदिश निर्मिति नही कहा जा सकता। बंदिश रचना की अनिवार्य शर्त यही है कि, शब्द–राग–ताल यह तीनों लगभग साथ में ही सूझने चाहिए।

सुगम गीत रचना (Music Composing) सुगम संगीत की रचना या कम्पोजिंग करनेवाले कलाकार को संगीत निर्देशक कहते हैं। इस कार्य के दो सोपान होते हैं :

१. गीत को संगीतबद्ध करना, तथा

२. संगीतबद्ध गीत को पूर्वधुन (Prelude), अंतर्धुन (Interlude) तथा गीतानुकूल वाद्य–संगति से सजाना। इसी को Music arranging कहा जाता है।

गीत को संगीतबद्ध करना :

किसी गीत को धुन में ढालने का सबसे आसान एवं प्रचलित तरीक़ा यह है कि काव्य भाव की समझ रखनेवाले संगीतज्ञ गीत/काव्य को पढकर समझते हैं कि उस गीत का स्थायीभाव क्या है, उसका छंद कैसा है। तदोपरांत संगीतकार के मन में गीत के भाव के अनुरूप धुन "सूझती" है। दरअसल इस सूझने की प्रक्रिया को समझाया या सिखाया नही जा सकता, क्योंकि यह प्रक्रिया अनिवार्य तथा पर्याप्त रूप से जटिल होती है। हरेक संगीतकार के प्रतिभा–स्तर तथा मनोवृत्ति के अनुसार यह सूझने की प्रक्रिया अलग–अलग हो सकती है। "सूझने" की प्रक्रिया को लगनेवाला समय भी अलग हो सकता है। यह तो हुआ एक तरीक़ा। संगीतबद्ध गीत तैयार करने के दीगर तरीकों में निम्न प्रमुख हैं:

सा) लगभग बंदिश निर्मिति की ही तरह, उच्च कोटि के कवि जब काव्य रचना करते हैं, तब वह किसी धुन के साथ ही जन्म लेती है। इस प्रकार गीत के शब्द तथा संगीत साथ–ही–साथ जन्म लेते हैं। इस प्रकार के कुछ सुप्रसिद्ध उदाहरण कविगुरू रविंद्रनाथ टागोर, मराठी भाषा के कवि बा. भ. बोरकर तथा सुरेश भट कह सकते हैं।

रे) एक अन्य प्रकार में, संगीतकार पहले अपनी प्रतिभा से धुन तैयार कर लेता है, और बाद में कवि/गीतकार को उस धुन के अनुसार शब्दकाव्य लिखने को कहा जाता है।

ग) किसी पुराने बंदिश/नाट्यगीत की ही धुन नए गीत के लिए प्रयोग में लाना। नाट्यगीतों को धुन देने की मान्यता प्राप्त पद्धति यही है कि ख्याल/ठुमरी/ लावणी/की स्वराकृति पर मराठी काव्य लिखकर, या फिर काव्य को इनकी धुन में ढालकर यह कार्य सम्पन्न किया जाता है। यह प्रकार सुप्रसिद्ध संगीतकार पं. हृदयनाथ मंगेशकर की संगीत रचनाओं में काफी दिखाई पडता है। राग बडहंस सारंग के ध्रुपद 'प्रथम पुरुष नारायण' पर आधारित पं. दीनानाथजी ने रचा 'वितरी प्रखर तेजोबल' यह नाट्यगीत तथा उस नाट्यगीत की धुन पर हृदयनाथजी ने संगीतबद्ध किया हुआ 'गगन सदन तेजोमय' यह फिल्मी गीत यह उदाहरण प्रसिद्ध है। 'हूँ जो गई' इस गौरी राग के ख्याल पर

आधारित 'जिवलगा, राहिले रे दूर घर माझे' तथा उसी ख्याल पर आधारित 'ओ बावरी, देख गगन है इस धरती से कितना ऊँचा री' यह फिल्मी गीत – यह भी इसी प्रकार का उदाहरण है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि ख्याल की बंदिश की रचना तथा सुगम संगीत की रचना यह दोनों संगीतरचना के भिन्न पहलू हैं। सुगम रचनाकार का काम गीत को धुन देना एवं उसका संयोजन ठीक से कराना यहीं तक सीमित नही होता है। उस गीत की धुन गायक को ठीक–ठाक सिखाना तथा गायक द्वारा अपने मन मुताबिक गवा लेना, यह भी संगीतकार का ही कार्य है। जहाँ सुगम रचनाकार का कार्य एक या दो गायकों को रचना सिखाकर समाप्त हो जाता है, वहीं बंदिश रचनाकार को अपनी बंदिशें महफिल में गाकर, अपने शिष्यों को सिखाकर प्रचलित करनी पडती हैं। बंदिश की रचना यदि उच्च कोटि की हो तो वह स्वत: ही लोकप्रिय हो जाती है, उसके लिए रचनाकार को ज्यादा प्रयास नही करना पडता। उदा. पुरानी बंदिशों में उपरोल्लेखित 'करीम नाम तेरो' यह अदारंग रचित ख्याल, शुद्धकल्याण में उन्ही की 'रस भीनी भीनी' यह द्रुत रचना, मालकौंस की 'कोयलिया बोले अंबुवा की डार पर' भीमपलासी की 'जा जा रे अपने मंदिरवा' आदि कई बंदिशें गिनवाई जा सकती हैं। नई बंदिशों में पं. गजाननबुवा जोशी, पं. रातंजनकर, पं. कुमार गंधर्व, पं. रामाश्रय झा 'रामरंग', पं. जगन्नाथबुवा पुरोहित 'गुनीदास', पं. सी. आर. व्यास 'गुनीजान', पं. बलवंतराय भट्ट, पं. शंकर अभ्यंकर, पं. मनोहरराव कासलीकर आदि गुणीजनों की बंदिशें काफी लोकप्रिय हैं।

संगीत में भाषा का महत्व

प्रो. नवीन खांडेकर
सेवादल महिला महाविद्यालय,
नागपुर.

अपने विकास क्रम के आरम्भ से ही, मानव हृदय में प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति आकर्षण था, आनंद की अनुभूति थी, उद्‌गार थे। वह अपने मन में उठने वाले भावों को अभिव्यक्ति देना चाहता था, फलस्वरूप भाषा का जन्म हुआ, विभिन्न ललित कलाओं का जन्म हुआ। कला अर्थात् मन में उठने वाले भावों को सुन्दर, सुलझे ढंग से अभिव्यक्त करना। इस संदर्भ में सभी ललित कलाओं में संगीत को सर्वश्रेष्ठ कला माना गया है। संगीत मनुष्य का चिरसंगी रहा है।

संगीत मनुष्य को प्राप्त एक दैवी वरदान है, इसे ईश्वरीय वाणी कहा गया है। संगीत, मनुष्य जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति या परमात्मा से साक्षात्कार का एक महत्वपूर्ण माध्यम तो है ही, हमारी सभ्यता एवं संस्कृति की एक अमूल्य धरोहर भी है। संगीत एक ऐसी भाषा है, जिसका प्रयोग अनादि काल से होता आया है तथा अनंत काल तक होता रहेगा। संगीत की उत्पत्ति पहले हुई या भाषा की इस विषय में मतभेद है, किन्तु दोनों ही मतों को मान्यता प्राप्त है।

संगीत अर्थात् स्वरों की भाषा। स्वर आत्मा की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम माने जाते हैं। संगीत मूलत: रसानुभूति एवं भावाभिव्यक्ति का योगफल है, जिसकी सार्थकता के लिये स्वरों की भाषा के साथ ही संगीत को ताल एवं शब्द इन दो तत्वों की भी अत्यन्त आवश्यकता होती है।

सर्वव्यापी संगीतमय नाद ''ऊँकार'' अनादि काल से ब्रह्माण्ड का आदि स्वर माना गया है, जो संगीत एवं भाषा दोनों का ही मूलाधार है। संगीत और भाषा दोनों का उद्‌देश्य भी भावाभिव्यक्ति है, अत: दोनो का संबंध जन्मजात है। दोनों का लक्ष्य भी एक ही है, अन्तर केवल इतना ही है स्वर भाव परिपोषक होते हैं, शब्द रस परिपोषक होते हैं।

भाषा या शब्द सारगर्भित तत्व है, जिसका संगीत से गहरा संबंध होता है। संगीत की भाषा मुख्यत: स्वर होने पर भी, स्वरों के उच्चारण के लिये शब्द आवश्यक हो जाते हैं। स्वरों की भाषा मूक होती है, शब्द उसे वाणी प्रदान करते हैं। संगीत को हम शब्दों से अलग नहीं कर सकते। शब्द और स्वर एक ही सिक्के के दो पहलू है। सम्पूर्ण संगीत सृष्टि को शब्दों की सहायता आवश्यक रूप से लेनी होती है, फिर वह तबले का धा धीं धीं धा हो, सितार कादा दिर दा रा हो या नृत्य का ता थेई, तत् थेई हो। कोई भी स्वर शब्दहीन हो ही नहीं सकता। संगीत के सारेगमप भाषा की वर्णमाला के वर्ण ही तो हैं।

प्रत्येक अलग–अलग शब्द का कोई अर्थ या महत्व नहीं होता, उन्हें सही क्रम में एक साथ रखने पर ही वे सार्थक बनते हैं, ठीक वैसे ही स्वरों की विभिन्न स्वर संगतियाँ एक साथ लेने पर ही स्वराकृति या स्वर रचना का निर्माण होता है। ये ही स्वर जब शब्दों के साथ गाये जाते हैं तब वे अधिक सरस, भाव पारिपोषक एवं सुन्दर बन जाते हैं और एक सांगितिक रचना का निर्माण करते हैं, जिसे संगीत में ''बन्दिश'' कहा जाता है।

स्वर ताल और योग्य शब्दों के उचित समन्वय से एक सांगितिक रचना या बन्दिश निर्माण होती है। संगीत की किसी भी विधा में संगीत और काव्य, स्वर एवं शब्दों का सुन्दर मेल होता है। भारतीय संगीत का मूलाधार यही बन्दिश है। बन्दिश अर्थात् बन्धन, मर्यादा, बाँधने की क्रिया या भाव। वैदिक काल से लेकर वर्तमान तक भारतीय संगीत की सम्पूर्ण यात्रा इन्हीं बन्दिशों के माध्यम से हुई है।

लोकसंगीत, शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, फिल्म संगीत, भक्ति संगीत,

मराठी मंच संगीत आदि संगीत की प्रत्येक विधा में बन्दिश एक अनिवार्य आवश्यकता रही है। दूसरे शब्दों में बन्दिश, भारतीय संगीत के हस्तांतरण के साथ ही हमारी संस्कृति के हस्तांतरण का भी प्रमुख माध्यम रही है।

प्राचीन काल में संगीत की भाषा संस्कृत रही है। समय परिवर्तन और विकास क्रम के साथ १६ वीं शताब्दी से आज तक नई—नई गीत शैलियाँ प्रचार में आई, जिनमें विभिन्न भाषाओं का प्रयोग दिखाई देता है। ध्रुपद में उर्दू, फारसी, हिन्दी, धमार में ब्रज, ख्याल में अवसर हिन्दी, फारसी, गजल में उर्दू, हिन्दी, ठुमरी में उर्दू, हिन्दी, ब्रज आदि।

लोकसंगीत की भाषा तो हर प्रान्त में बदल जाती है। अपने—अपने रीति—रिवाजों के अनुसार विभिन्न संस्कार गीत, पर्व गीत आदि में प्रादेशिक भाषा का पुट रहता है। राजस्थान का मॉड, गुजरात का गरबा, पंजाब का भांगडा, छत्तीसगढ़, बुंदेलखण्ड, मालवी, त्रिमाडी गीत, भाषा के कारण ही पहचाने जाते हैं। वैसे ही संगीत के सात सुरों ने इन्हें पहचान दी हैं। सुन्दर भाषा और भाव संगीत को प्रभावी बनाते हैं। बिना भाषा के संगीत अधूरा है।

सामगान से लेकर वर्तमान तक संगीत और भाषा की गंगा—जमना का प्रवाह एक साथ बहता आया है। भाषा से संगीत की पहचान है तो संगीत भाषा के लिए एक अमूल्य वरदान हैं।

"आज से पहले संगीत क्या था? मेरी दृष्टि में"

डॉ. शिप्रा सरकार
एल.ए.डी. कॉलेज,
नागपुर.

संगीत का ऐतिहासिक विवेचन हम सदैव पढ़ते और सुनते रहते है, किन्तु यह विवेचन पूर्णत: व्यावहारिक है। यह एक अवलोकन है, अवलोकन इस बात का, कि संगीत का क्रियात्मक पक्ष आज से पहले कैसा हुआ करता था। प्रयास यह होगा कि संगीत की प्रत्येक विधा का यथा संभव विवेचन हो सके यह ऐतिहासिक न होने से कोई भी तथ्य कलानुरूप क्रम से न रखा जाये ये संभव है।

शास्त्रीय संगीत — शास्त्रीय संगीत से तात्पर्य संगीत शास्त्र के व्यावहारिक उपयोजन से है। यह हम सभी जानते है, किन्तु एक और सत्य का ध्यान उस समय के कलाकार रखा करते थे कि कोरे शास्त्र के नाम पर संगीत कला को रूखा न बनाया जाए जिस प्रकार प्राचीन शास्त्र (संगीत रत्नाकार आदि) ''रन्जइति इति रागा'' कहकर राग का व्यवहारिक पक्ष परिभाषित करते थे उसके अनुसार राग की रन्जकता का पूर्ण उपयोग अपनी प्रस्तुति में कलाकार किया करते थे, कहने का अभिप्राय यह है कि संगीतज्ञ इस ओर जागरूक हुआ करते थे कि कला से ही शास्त्र का जन्म है। शास्त्र नियमों के नाम पर कला को मृतवत बनाना कलाकारों को स्वीकार्य नही था। गाते—बजाते समय वे राग के भावात्मक प्रभाव को समझकर राग को ऐसा मोड भी दे दिया करते थे, जो शास्त्र नियम से कुछ हटके होता था फिर भी बड़ा रन्जक होता था, उदा. स्वरूप राग बागेश्री में शास्त्र नियमानुसार पंचम का अल्पप्रयोग अवरोह में किया जाता है, किन्तु कुछ कलाकार अपनी प्रस्तुति में अथवा वाग्येकार अपनी गीत रचना में उस स्वर का प्रयोग आरोह मे भी थोडा सा करते पाये जाते है। इसीप्रकार विवादी स्वर का भी इतनी कुशलता से प्रयोग होता था, कि वह प्रयोग उस कलाकार की विशेषता के रूप में प्रसिध्द हो जाता था। भावात्मक दृष्टि से यदि हम पहले के कलाकारो को सुनें तो यह पायेगे कि उनकी प्रस्तुति में एक जीवन्तता है अर्थात प्रस्तुति करते समय वे स्वयं उसमे रसमग्न हो रहे है। पहले ये मान्यता थी कि जिस कलाकार का मन एवं मस्तिष्क निष्कपट तथा निर्मल होगा उसकी प्रस्तुति उतनी ही प्रभावी होगी।

सुगम संगीत : सुगम संगीत का प्रारंभिक रूप भले ही काव्यमय अधिक था, परन्तु भारतीय सुगम संगीत शास्त्रीय संगीत का आधार लिए हुए था। सुगम संगीत में स्वाभाविक रूप से स्वर अथवा राग तत्व की अपेक्षा पद अथवा काव्य में निहित भावतत्व का महत्व अधिक था, तथापि भावाभिव्यक्ति हेतु उपशास्त्रीय संगीत की भांति शास्त्रीय रागों का आश्रय अथवा बोल बनाव का प्रयोग होता था। जब सुगम संगीत का आरंभ हुआ था तभी से ध्वनि मुद्रण की व्यवस्था भी देश में प्रचलित हुई थी। इस कारण किसी गीत को जनता के समक्ष प्रत्यक्ष रूप से लाने के कार्य में गीतकार—संगीतकार तथा गायक—कलाकार का मिलाजुला प्रयास हुआ करता था। यहाँ तक कि वे साथ मिलकर बैठते थे और गीतरचना को अपने—अपने मौलिक योगदान तथा परामर्श से मिलकर तैयार कर जो गीत रचना बनकर तैयार होती उसमें तीनों की आपसी सहमति हुआ करती थी। वादक कलाकार का भी यथेष्ठ सहभाग हुआ करता था। गीत की रचना करने से लेकर ध्वनि मुद्रित होने तक यह सहयोग और सौहार्द्र का वातावरण बना रहता था। सभी अपने पक्ष का आनंद लेते थे फलस्वरूप एक सुंदर जीवंत रचना सबके समक्ष उभरकर आती थी।

उपशास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नही कहा जा सकता केवल इतना अनुभव होता है कि भाव का प्रकटीकरण पहले की अपेक्षा आज कृत्रिम सा हो गया है। मनोरंजन अथवा प्रभावकारिता के कुछ तैयार नुस्कों का आज आश्रय लिया जा रहा है, वही पहले ये सब कलाकार का अपना हुआ करता था निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते कि यांत्रिक उन्नति, प्रस्तुतिकरण का बाहय सौंदर्य आदि पहले अवश्य ही कम रहे होंगे पर उस समय की प्रस्तुति में एक स्वाभाविकता तथा हृदयता भरपूर हुआ करती थी आज यांत्रिक उन्नति भी बहुत है बाहय सौंदर्य भी भरपूर है, किन्तु वह स्वाभाविकता अथवा कला का मर्म खोजने की आवश्यकता है, वह दुलर्भ है।

Sangeet Galaxy Journal: An Initiative to Online Publication

Dr. Amit Verma
Assistant Professor,
Visva Bharati University
Shantiniketan, W.B.
Email:
kr.amitverma@gmail.com

At present there are three dimensions of Music Education–Traditional *Gharanedar* education system through *Guru- Shishya parampara*, Institutional Music Education System and Distance Music Education. From the thousands of years we have been following the trend of *Guru –Shishya parampara* for Music Education. In the beginning of 20th century Institutional Music Education system was introduced. *Pt. Vishnu Digambar Paluskar* and *Pt. Vishnu Narayan Bhatkhande* have established the music institutes and popularized the trend of institutional music system and today in 21st century, with the help of information technology, we are availing the facility of Distance Education or E – Learning in Music.

In the field of education, information technology has opened the new doors to access the knowledge and information through CD, DVD, e-teaching, e-journals etc. As we know that the journals are vital source of information for scientific research and development in academic libraries and information centers. E-journals have many advantages such as; easily searchable, interactive, accessible, inexpensive etc. Today E- Journals are need of time.

There are lots of journals in the field of music; Sangeet Patrika, Sangeet Kala Vihar, Chhayanat, Sangeet Natak, Sangana and many more but according to need of time an online journal was awaited. I initiated and establish Sangeet Galaxy, the first peer reviewed e-journal dedicated to Indian Music, working in the field of music publication since 2012. The purpose of this journal is to provide an intellectual and independent platform for publication of research done by researchers in the various disciplines of music. The journal covers different fields of music for publication i.e. North Indian Classical Music, Karnatik Music, Folk Music etc. Journal welcomes original and unpublished Research Paper/Articles/Book Reviews/Interviews/ Current Information from different fields of music. Journal accepts manuscript for publication both in Hindi and English language. The publication frequency of this journal is half early.

Open Access Policy: Sangeet Galaxy Journal works on open access policy. It provides free and unlimited access of full text of published research paper/article to its user. It is 24x7 freely available without any subscription or financial barrier. Sangeet Galaxy is in favor of global exchange of knowledge in the field of music education and research.

Editorial Advisory Board : Journal has a well experienced editorial advisory board. The members and subject expert of board are from different universities of India. Besides it, a review panel of expert is formed for every issue of the journal. All papers are referred through blind review process.

Quality Publication: 'Sangeet Galaxy' is active since 2012 in the field of music

publication and till now it has published more than 110 quality research paper/ articles including interviews and book reviews. Journal is dedicated to enhance the corpus of knowledge in the different domains of Indian music and provides free and unlimited access to the full-text of articles published in the Journal.

Enlisted in EBSCO Database : Journal is enlisted in EBSCO database. EBSCO is a powerful online reference system accessible via the Internet. It offers a variety of proprietary full text databases and popular databases from leading information providers.

E-Database of Research Title (E- DORT) : At present, Journal is providing an online database of Ph.D & M.Phil's research titles of music. More than 32 universities are included in this database. This database is very helpful for coming research scholars. It helps in literature review, avoid repetition of research work and prevent the wastage of man power. With the help of this database we have developed a network to know, how many research have been completed and how many are in running position in the field of music. **E-Galaxy of Music Academicians (E-GOMA)** : Sangeet Galaxy has prepared a database of profiles of Music Academicians working at different universities. It provides important information about the experts, their experiences, scholarly publications, skills, achievements with their contact address. It is an attempt to make bridge among music academicians. At present more than sixty music academicians have been enlisted in this database.

E-Directory of Music Articles (E-DOMA): At present, good research in the field of Indian music is a very challenging task for the researchers as there are lacks of updated directories of research papers/ articles. E-DOMA is an E- Directory of qualitative published articles of music. It is need of time to create a digital environment to enhance the quality of Music Research. With the help of this directory Researcher will be aware with existing body of knowledge in concerned field easily. E-DOMA project of Journal is in formation process, it will display in functioning order very soon.

'Sangeet Galaxy' journal is eager to develop a strong co-ordination with researchers, academicians and music readers. The mission of this journal is to contribute to the progress in the field of music research by providing free access to research information online without any technical barriers. Being a high energy, fast moving with strong tendency of action 'Sangeet Galaxy' is constantly looking for new ideas and suggestions.

वैश्वीकरण में संगीत की भूमिका

डॉ. प्रमोद रेवतकर
विभाग प्रमुख
एफ.ई.एस.गर्ल्स कॉलेज,चंद्रपूर.
मो.नं. ९७६६०९८१९०
Email – pmrewatkar@gmail.com

शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिकता और परिवर्तन मूलतंत्र होना चाहिये । आधुनिकता समय का प्रतिनिधित्व करती है और परिवर्तन जीवन के प्रवाह का। संगीत के क्रियात्मक एवं शास्त्र के क्षेत्र में समय–समय पर बदलाव होते रहे हैं । ये बदलाव ही विकास के द्योतक रहे हैं । इसके पीछे गहन चिंतन ही विकास प्रक्रिया को सुदृढ कर रहा होता है ।

शिक्षा का मूलभूत कार्य यही है वह विद्यार्थी मे आई सभी व्यधियों एवं सीखने से सम्बन्धित सभी बाधाओं को ढेर करें । सभी प्रकार की शिक्षा का ध्येय व्यक्तित्व विकास में आई अवरुध्दता का को दूर कर उसे मुखर बनाना, होना चाहिये ।

वैश्विक समाज व्यवस्था एंव अर्थव्यवस्था एवं सांस्कृतिकीकरण के कारण कुछ दशको से जागतिकीकरण इस प्रक्रिया का आरंभ हुआ । जागतिकीकरण यह प्रक्रिया होकर भी एक संकल्पना के रुप मे उभर कर सामने आ रही है । सभी सामाजिक शास्त्रों द्वारा इस प्रक्रिया एक संकल्पना को विकसित करने के पुक्ता प्रयास किए जा रहे है । ठीक इसी प्रकार सांस्कृतिक एवं सांगितीक प्रक्रिया और संकल्पना के नाते हमें भी इसका स्वीकार करना अनिवार्य हो जाता है । जानकारी एवं तंत्रज्ञान का बढता स्त्रोत एवं विस्तार इस कारणवश विश्व में देश विदेशो में भौगोलिक अंतर कम हुआ है । इंटरनेट का प्रचार प्रसार बहुत तेज गति से संपूर्ण विश्व में हुआ है । जानकारी एवं तंत्रज्ञान में हो रहे क्रांतिकारी परिवर्तन से हो रहा है । दूरध्वनी, भ्रमणध्वनी,ई मेल,फेसबुक, व्हॉटसअॅप इत्यादि वैज्ञानिक उपकरणों का विकास, प्रवास यात्रा हेतु विमानो की उपलब्धि ई जर्नल्स, ई बुक्स, इलेक्ट्रॉनिक सांगितीक उपकरण एवं वाद्य आदि वैज्ञानिक प्रगत संसाधनो द्वारा सामाजिक एवं सांस्कृतिक सांगितीक संक्रमण हो रहा है और संपूर्ण विश्व एकात्म हो रहा है ।

इतिहास की और एक दृष्टि डालने पर बहुत से वैश्वीकरण के प्रमाण प्राप्त होते है । सर सुरेंद्र मोहन ठाकुरजी के मतानुसार सातवे शतक के उपरांत में इरान व भारत के कलाकारों में आदान प्रदान शुरु हुआ, इसका दोनों ही संगीत कलाओं पर परस्पर परिणाम होने लगा इसी को हम सांस्कृतिकता या जागतिकता कह सकते है । यह जागतिकीकरण का उदाहरण है ।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल से ही भारत विश्व के विभिन्न देशों के साथ सांगितिक संबंध स्थापित कर विश्व–शांति व विश्व–बंधुत्व की परिकल्पना को यथार्थ में परिणित करता आया है । विभिन्न कालों में भारतीय संगीत का प्रचार प्रसार धार्मिक एवं शिक्षण संस्थाओं, व्यापारिओं, युध्द के सिपाहियों, वैवाहिक संबंधों आदि के माध्यम से होता रहा है। आजादी के पश्चात भारतीय संविधान का निर्माण किया गया । जिसमें भारत की समृध्द सांगितीक परंपराओं एवं कलाओं के प्रचार प्रसार व आदान प्रदान हेतु कई सांस्कृतिक नीतियॉ भी निर्धारित की गई। इसके अंतर्गत भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, संगीत नाटक अकादमी, सांस्कृतिक संसाधन और प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना की गई। इसमें भारत सरकार द्वारा संगीत एवं लोक कला के कलाकरों, विद्वानों व प्रशिक्षिको कों विदेशों में संबंन्धित कला के अध्यापन व प्रचार प्रसार के लिए भेजा जाता है । इससे पूरब व पश्चिम की संस्कृति तथा संगीत का संगम होता आया है ।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सांगितीक संबंधों को दृढना प्रदान करने के लिए विभिन्न देशों की सरकारें

तथा निजी संस्थाएँ समय समय पर एक दूसरे के संगीत कलाकारों को सम्मानित करती रहती है , जिससे सांस्कृतिक भाईचारे की भावाना को बल मिलता है । पाकिस्तान के अनेक कलाकार उस्ताद गुलाम अली, उस्ताद नुसरत अली, आबिदा परवीन आदि भारत में सम्मानित किए जा चुके है । विदेशी संगीतकारों में विश्व प्रसिध्द वाइलीन वादक लॉर्ड यहूदी मेन्यूहिन को केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी द्वारा 'रत्न सदस्यता' से सम्मानित किया गया । इससे अतिरिक्त संगीत के अंर्तराष्ट्रीय मंच पर विश्व के तमाम देशों ने भारतीय संगीत कलाकारों को उच्च सम्मानों एवं पुरस्कारो से सम्मानित किया है । जिसके अंतर्गत पं. रविशंकर को संगीत जगत के सर्वोच्च अंर्तराष्ट्रीय सम्मान 'ग्रॅमी अवॉर्ड' से दो बार सम्मानित किया जा चुका है । साथ ही 'रोमन मैगसेयसेय' अवॉर्ड, पंधरा विश्व विद्यालयोने इन्हे डॉक्टरेट की उपाधि से सम्मानित किया है । भारत के और अन्य दिग्गज कलाकरों को भी अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर सम्मान मिला है जैसे प. विश्वमोहन भट्ट, उस्ताद अमजद अली खॉ, शोभा मुद्‌गल, पं. बी.जी. जोग, डॉ. एल. सुब्रहण्यम आदि. संगीत के अंर्तराष्ट्रीय मंच पर भारतीय संगीतकारों ने विभिन्न देशों के संगीतकारों के साथ मिलकर संगीत की दो भिन्न धाराओं की जो जुगलबंदी प्रस्तुत की, वह संगीत के वैश्वीकरण के साथ साथ अंर्तराष्ट्रीय मंचपर विभिन्न देशों के मध्य सांगितीक एवं सांस्कृतिक एकता को भी दर्शाती है । यहूदी मेन्यूहिन ने भारतीय धुनों को अमेरिका तथा ब्रिटेन की जनता के सामने प्रदर्शित कर जो लोकप्रियता हासिल की, उसके लिए उन्होंने स्वयं को भारतीय संगीत का ऋणी माना है । बालसानियन जैसे रुसी संगीतकारने कालिदास की कृति 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' पर आधारित बेले नृत्यों की संगीत रचना कर भारतीय साहित्य एवं पश्चिमी संगीत का अनुठा संगम कराया है । इनके साथ ही हॉलीवुड की कई फिल्मो में भारतीय संगीतज्ञों ने सफल संगीत निर्देशन कर अंर्तराष्ट्रीय स्तरपर भारतीय संगीत की व्यापकता तथा गहरी प्रभावशीलता का परिचय दिया ।

भारतीय संस्कृति की गौरवमयी परंपरा की अमूल्य धरोहर 'भारतीय संगीत' सृष्टि के उदगम के समय से ही संपूर्ण विश्व की प्रत्येक गतिविधि में समाहित है । संगीत एक जीवनधारा है, जो सृष्टि में चर—अचर में, समस्त प्रकृति व जीवनधारियों में व्याप्त है । संगीत मानव के लिए भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों दृष्टियों से साधना का विषय है और भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है । कला व संगीत ने भारत की सभ्यता में आस्था को जागृत किया । शक्ति अथवा दैव प्रार्थना ने उसे सौदर्य व विचार से जोड दिया । यह भारत की सम्पन्नता से आकर्षिक होकर अनेको विदेशियों का यहॉ पर आगमन हुआ, जिनकी सभ्यता और संस्कृति प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव यहॉ के जन जीवन पर पड़ा व भारतीय संगीत भी इस प्रभाव से वंचित न रह सका । इन विविध प्रभावों के फल स्वरुप नवीन स्वर,ग्राम, राग, ताल आदि अस्तित्व में आए तथा राग वर्गीकरण की नई नई पध्दतियों का प्रादुर्भाव हुआ, नई गान शैलियों, नई भाषा, नए छंद व नवीन कौशल आदि का समय समय पर प्रस्फुरण हुआ परंतु आज का मानव वैश्वीकरण के युग में संशय की स्थिति मे खडा हैं । वर्तमान संगीत क्या है ? बीसवी सदी के अंतिम चरण में भारतीय संगीत का चेहरा जितनी तीव्र गति से बदला है , वह गति और परिवर्तन दोनों चौकाने वाली बातें है । इस परिवर्तन से सांस्कृतिक बदलाव का दौर पुरानी समृध्दि को ही निगलने लगे तो क्या कहेंगे !

भारतीय समाज में आ रहे इन परिवर्तनो की जड बीसवी सदी के अंत में किए गए आर्थिक सुधार और संचार—क्रान्ति में है । इस बात में कुछ सीमा तक सच्चाई भी है । किन्तु गौर करने पर बात इससे भी आगे जाती है । यह ठीक है कि संचार—क्रांन्ति और आर्थिक सुधारों के कारण इस सामाजिक परिवर्तन की गति में तीव्रता आई है । किन्तु इस परिवर्तन का उपादान कारण तो 'भूमण्डलीकरण' है । भारत में अनेकानेक अन्तर्विरोधों से गुंफित इस भूमण्डलीकरण के प्रभाव का प्रादुर्भाव प्रथमत: कला और साहित्य पर

हुआ ।

आज भारतीय संगीत के पटल पर जो शब्द सर्वाधिक सुनाई दे रहा है , वह 'ग्लोबल म्युजिक', याने कि यह वह संगीत है, जो वैश्विक स्तर पर सुना जाता है और जिसका स्तर उत्पादन, प्रकाशन और वितरण संगीत से संबंधित उद्योगों से होता है ।

आज का श्रोता अपनी इच्छा के अनुरुप संगीत का चयन कर श्रवण करता है । जहॉ तक शास्त्रीय संगीत की प्रसिध्दि और श्रोताओं की बात है, आज जो संगीत है, उसमें से नब्बे प्रतिशत शास्त्रीय नही है । कारण शास्त्रीय संगीत में बहुत कम परिवर्तन देखने को मिलता है ।

बीसवी शताब्दी में भारतीय संगीत की सभी प्रवृत्तियाँ उभरी हैं । शास्त्रीय संगीत के साथ लोक संगीत, फिल्म संगीत, नाटयसंगीत, सुगम संगीत, विशेष रुप से हिंदुस्तानी संगीत में भारी परिवर्तन हुए हैं और इन बदली हुई परिस्थितियों में जो कलाकार सामने आ रहे हैं, उनकी गायन शैली भी बदली हुई है ।

इस सबके बावजूद वैश्वीकरण की ऑधी में संगीत से सम्बन्धित नवीन दिशाए भी दिखाई दी हैं, जैसे वर्तमान में कलाकार व श्रोता के मध्य जो ऐतिहासिक दूरी थी, वह अब मिट गई है । वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से हम किसी भी प्रकार के संगीत को सुन व सीख सकते हैं । इंटरनेट के 'यु टयुब' में छोटे बडे सभी संगीतज्ञों की प्रस्तुतियाँ सुन सकते है । गंधर्व चैनल पर हर समय शास्त्रीय संगीत का प्रसारण होता है, उससे ज्ञान प्राप्त कर सकते है ।

हमें आज एक बात समझने की आवश्यकता है । वह यह कि संसार में जो भी श्रेष्ठ है, वह हमारे काम का है । मीडिया में हर जगह संगीत व्याप्त है । बस हमें नई शक्तियों के प्रति जागरुक होने की जरुरत है, क्योकि संगीत की दृष्टि से भारत की सांस्कृतिक विरासत अत्यंत समृध्द रही है ।

संगीत मानवतावाद का पोषक है तथा संगीत से प्रेम,सहिष्णुता व विश्व–बंधुत्व की भावना का सहज ही विकास होता है, इसलिए विश्व को आंतकवाद की समस्या से उबारने तथा उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण नई पीढी मे हुए नैतिक मूल्यों के ऱ्हास की पूर्ति करने के लिए भारत अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर सांगितीक संबंध बनाकर जहॉ एक और नैतिकता तथा मूल्यवान परंपराओं के निर्वाहन की शिक्षा दे रहा है, वही दूसरी ओर विश्व–शान्ति, विश्व –बंधुत्व एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना को साकार रुप देने मे भी प्रयासरत है ।

संदर्भग्रंथ सूची :–

ग्रंथ नाम लेखक प्रकाशक

१) संगीत कलाविहार २००६ –डॉ. शोभा गुरजर – अ.भा.गा.म.,मुंबई

२) संगीत मासिक ऑक्टो २००९ – डॉ. नमिता यादव – संगीत ध्कार्यालय, हाथरस

३) संगीत मासिक जून २००९– अमितकुमार वर्मा – संगीत कार्यालय,हाथरस

४) आधुनिक जग – डॉ. धनंजय आचार्य – साईनाथ प्रकाशन,नागपूर

दैनंदिन संगीत – लोकसंगीत की छटा

प्रा. डॉ. श्वेता दी. वेगड
संगीत विभाग,
श्रीमती रेवाबेन मनोहरभाई पटेल
महिला महाविद्यालय,
भंडारा. महाराष्ट्र.
ashwetavegad@gmail.om

परिचय : ब्रम्हांड में सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही ध्वनि की उत्पत्ति हुई।वहीध्वनि मानव विकास के साथ विचारों के आदान–प्रदान, भावनाओं की अभिव्यक्ति आदि के लिये प्रयुक्त होने लगी, यही भाषा का उद्‌गम कहा जा सकता है। मानवीय मनोभावों जैसे रति, न्हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय, भक्ति आदि रसों की चरम अभिव्यक्ति संगीतमय नाद के रूप में अधिक प्रभावशाली एवं आकर्षक रुप से व्यक्त होती है, जिसमें स्वरमाधुर्य, भाव भंगिमा आदि का समावेश मनुष्य की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रहा और यही संगीत की उत्पत्ति का कारण रहा होगा।

संगीत वह सुखद ध्वनि है जो हमें सद्‌भाव और आनंद का अनुभव करने के लिए प्रेरित करती है।मानवीय भावनाओं एवं संवेदनाओं को स्वरों द्वारा अभिव्यक्त करने की अविरल धारा ही संगीत है। संगीत मानव मन के अभिव्यंजना मधुरता से भर देता है। भाव और अंत:करण का संबंध अपूर्व है। भावपूर्ण रचना सहज ही मन को आकर्षित कर लेती है। वही प्रभाव संगीत में भी स्पष्ट रूप से था। उस समय के संगीत में स्वाभाविकता अधिक थी, अलंकारिता कम। इसलिए संगीत जब भावप्रधान होता है तो शास्त्रीय संगीत का किंचित मात्र भी ज्ञान न रखने वाला साधारण व्यक्ति भी रस विभोर हो उठता है। राग और स्वर का प्रभाव व्यक्ति पर बिना किसी जाति, संस्कार, धर्म, और देशभेद के पड़ा करता है। क्योंकि संगीत एक ऐसा माध्यम है, जो सभी प्रकार के विभेदों से मुक्त है और यही अभेद तत्व भारतीय संगीत की आत्मा है। चूंकि सभ्यता, संस्कृति और संगीत तीनों एक दुसरे के अभिन्न अंग हैं। Martin Lutheru अपने विचार कुछ इन शब्दों में व्यक्त किए हैं, Next to the word of God' the noble art of music is the greatest treasure in the world.' किसी भी कला का मुख्य उद्देश्य सौंदर्य निर्मिति होती है। सौंदर्य की आकांक्षा या उसके प्रति आसक्ति, यह मानव की प्रकृति है। मानव स्वयंमेव ही प्रकृति एवं नाद की ओर खिंचा चला जाता है, जिसका मुख्य कारण है मानव की जन्मजात सौंदर्यदृष्टि। मानव का सौंदर्य के लिए यह आकर्षण ही कला की निर्मिति तथा विकास के लिए प्रेरणास्त्रोत साबित होता है। कला वह विधा है जो एक हदय से निकलकर दूसरे में प्रवेश कर जाती है। Art is Impression and Expression on one side and Representation and Communication on the other side. अर्थात् कला एक ओर प्रभाव और अभिव्यक्ति का साधन है तथा दुसरी ओर प्रतिनिधित्व और संचार का एक सशक्त माध्यम है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त कला यह प्राकृतिक कला है जो आदि काल से चली आ रही है, जिसमें लिए विशेष शिक्षा, मार्गदर्शन, अभ्यास आदि विशेष महत्व नही रखते। इसकी सहजता तथा सरलता से जनजन में सहज ही दिखलाई पड़ती है। सरल भाषा में हम इसे लोक कला की उपमा दी जा सकती है।

प्रकृति से संबंध : प्रारंभ से ही मानव का प्रकृति के साथ घनिष्ठ संबंध रहने के कारण उसकी हर क्रिया प्राकृतिक थी, इसलिए अपनी अनुभूतियों में वह प्रत्येक परिस्थिति में प्रकृति को ही देखा करता था। प्राकृतिक नियम के अनुसार प्रत्येक प्राणी अपनी अनुभूतियों को किसी न किसी रूप में सदा से अभिव्यक्त करता आया है। लोकसंगीत जीवन के प्रारंभ से लेकर अंत

तक प्रत्येक कार्यकलाप में विश्व के हर एक स्थान पर मानव से संलग्न रहा है। इसके द्वारा मानव अपने दैनंदिन कार्यकलापों के दरमियान इतना अधिक मग्न हो जाता है कि सारी कठिनाइयों को परे कर अपनी सफलता के परचम लहराने में आनंदपूर्वक अंजाने में ही अग्रसर होता जाता है। जीवन और संगीत के नैसर्गिक संबंध का वास्तविक परिचय हमें लोकसंगीत द्वारा मिलता है। वैदिक ऋचाओं की तरह लोकसंगीत भी अत्यंत प्राचीन एवं मानवीय संवेदनाओं के सहजतम उद्‌गार है। ये लिखित रूप में न होकर जीवनशैली का वर्णन करता पलता बढ़ता रहा है।

लोकसंगीत का परिचय :लोकसंगीत जो कि संगीत की उत्पत्ति का प्रेरणास्त्रोत रहा है यह विश्वव्यापी, विविधधर्मी, विशाल तथा सभी के लिए सहज उपलब्ध होने के कारण उसकी व्याख्या करना 'सूर्य को दीपक दिखाने' के समान होगी। प्रकृति के सानिध्य में जन्मा—पनपा यह प्रकार विश्व के महासंगीत का एक प्रारंभिक स्वरूप है। इसके निर्मिती के लिए अनेक भौगोलिक सीमा, ऐतिहासिक पार्श्वभूमि, साहित्यिक परंपरा, सांस्कृतिक विशेषता, लोकव्यवहार, रीति परंपरा आदि कारक रहे हैं। यह एक ऐसा लोकसाहित्य है जो कि सामान्य लोगों के जीवन से उपजा, उन्हीं के गलों मे खेला, खिला, रमा, वंश परंपरा के साथ बढ़ता हुआ उन्हीं के जीवन से एकरूप हो गया। लोकसंगीत भिन्न भिन्न देशों की संस्कृति, प्राचीन रूढ़ी परंपरा, आचारविचार, धार्मिक कल्पना, समाजरचना, दैनंदिन जीवन की हलचलआदि के विषय में जानकारी प्रदान करता है। अत्यंत सरल धुन तथा सरल ताल यह लोकसंगीत की विशेषता है। इसकी शब्दरचना ग्रामीण होते हुए भी गीत का आशय तथा भावनाओं के कारण वह लुभावनी तथा आकर्षक बन पड़ती है। ग्रामीणों ने इन गीतों के स्वरों व शब्दों में मानों अपनी संपूर्ण संवेदनाओं और अनुभूतियों को निष्कपट, सरल और स्वाभाविक ढंग से रख दिया हो।

कुछ विद्‌वानों के मतानुसार प्रथमत: यज्ञसंगीत, जातिसंगीत, लोकसंगीत तदुपरांत रागसंगीत ऐसा संगीतप्रवाह माना जाता है। लोगों द्वारा लोगों के लिए लोकभाषा के आधार पर किया गया काव्य या गीत अर्थात् लोकसंगीत ऐसी परिभाषा सामान्यत: लोकसंगीत का अर्थ स्पष्ट कर जाती है। भारत की विभिन्न जनजातियाँ जैसे वारली, कातकरी, गौंड आदि संगीत से प्रभावित रही है जोकि उनकी सरल प्रकृति की निश्चल छबी की ओर इंगित करती है। प्रकृति से एकरूप हुए लोगों को, प्रकृति द्वारा उदारता के साथ प्रदान किया हुआ प्रेरणा से ओतप्रोत, भावनाओं से परिपूर्ण ऐसे शब्दसुरों का नजराना अर्थात् लोकसंगीत। जोकि शब्द—सुरों को साथ लेकर ह्रदय के स्पंदनों को प्रभावित करता है। सरलतापूर्वक भावों को व्यक्त किया जाना लोकभाषा की खासियत होने के कारण अक्सर लोकधुनों की रचना लोकभाषा में होती रही है। इस संगीत में शब्दों का आडंबर नहीं होता, ना ही स्वरों की स्पर्धा होती है केवल सीधे साधे मन की अभिव्यक्ति, किसी दैनंदिन जीवन में घटनेवाले प्रसंगों पर प्रतिक्रिया या वर्णन होता है। उसमें मन की हलचल, भिन्न ऋतुओं का वर्णन, समुद्र से अथांग प्रेम की कृतज्ञता के साथ की गई स्तुति, मानवीय रिश्तों के विषय में भाष्य, आदि विषयों का समवेश होता है। मानव की समूह में रहने की, अपनी अभिव्यक्ति व्यक्त करने की, जीवन में लयबद्धता कायम रखने की सदैव प्रसन्न रहने के लिए प्रयत्नशील रहने की, अपने संवेदनाओं को किसी न किसी माध्यम से व्यक्त करने की सरल एवं सक्षम प्रक्रिया प्रमुख रूप से होती है। भारत यह अनेक भाषा, परंपराओं से सजा हुआ होने के कारण भारत के लोक संगीत भी विविधता तथा समृद्धता से परिपूर्ण है।

लोकसंगीत सरल है, सुग्राहय है, अकृत्रिम है, स्वाभाविक है और स्वत: साध्य भी है। सरलता में ही सौंदर्य की अनुभूति लोकसंगीत के लिए पूर्णत: सत्य प्रतीत होती है। लोकसंगीत का गायन यह पूर्णत: स्वान्त: सुखाय होता है। उसके गायन में किसी बाह्याडंबर की आवश्यकता नहीं होती। अब से कुछ ही वर्षोपूर्व का अवलोकन करने पर हम पाते हैं कि जीवन के प्रत्येक कार्यकलापों का संबंध हमारे दैनंदिन जीवन में

पूर्णत: व्याप्त था। चूंकि उस समय अत्याधुनिक उपकरण नहीं थे, सुबह का प्रारंभ चाहे वह गृहणी का आँगन या कमरों की सफाई हो या आँगन में पानी छींटना हो, चक्की में आटा पीसना हो या कुएँ पर पानी भरने जाना हो, पनघट से पानी भर कर लाना हो, खेतों खलिहानों में काम करने जा रहे हों, या काम कर रहें हो, हर पल हर घड़ी हर कार्य में कोई न कोई लोकगीत अपनी छटा बिखेरते मिल ही जाता था, कार्य करते समय जो भी आवाजें होती थी। ग्रामीण महिला के कोकिल कंठ स्वर के साथ मिलकर संगीत का रूप धारण का लेती है। यहां तक की हमारे किसान काम पर या घर की ओर जा रहे हों या मांझी नाव चला रहे हों लोकसंगीत से अछुते नहीं होते थे।ढेकला चलानेवाले पानी की सरसराहट और छप छप की ताल पर ही गा उठता है, गाड़ी हाँकने वाला व्यक्ति बैलों के घंटियों और खुरों की आवाज के साथ ही अपना स्वर मिला लेता है। धोबी कपड़े की फटफट से और बर्तन माँजनेवाली स्त्री बर्तन की खनखनाहट को ही अपने गीत का माध्यम बना लेती है। लोकगीत की स्वररचना भी बहुत सरल और स्वभाविक होती है एवं स्वर तथा शब्दों से पूर्ण मेल खाते हैं। लोकगीतों में जो भी स्वर प्रयोग मिलते हैं वे अपनी सरलता और स्वभाविकता के कारण हदय को बरबस अपनी ओर खींच लेते हैं। गायकसंगीत में इतना तन्मय होता है जिसमें वह स्वयंमेव ही कभी कभी बहुत सुंदर खटकों और लयों का प्रयोग कर जाता है, लोकसंगीत में समस्त नौं रसों का सुंदर और हृदयाकर्षक चित्रण मिलता है।

मानव यह समाजाभिमुख होने के कारण त्योहारों में उत्पन्न भावनाओं का अभिव्यक्ति वह साधारण बोलचाल के शब्दों में उत्स्फुर्त रूप में गीतों के माध्यम से करता है।लोकगीत प्रकृति के उद्‌गार है। संगीतमयी प्रकृति जब गुनगुना उठती है लोकगीतों का स्फुरण हो उठना स्वाभाविक ही है। विभिन्न ऋतुओं के सहजतम प्रभाव से अनुप्राणित ये लोकगीत प्रकृति रस में लीन हो उठते हैं। बारह मासा, छैमासा तथा चौमास गीत सत्यता को रेखांकित करने वाले सिद्ध होते है। पावसी संवेदनाओं ने तो इन गीतों में जादुई प्रभाव भर दिया है। पावस ऋतु में गाए जाने वाले कजरी, झुला, हिंडोला, आल्हा आदि इसके प्रमाण है।साहित्य की छंदबद्धता एवं अलंकारों से मुक्त रहकर ये मानवीय संवेदनाओं के संवाहक के रूप में माधुर्य प्रवाहित कर हमें तन्मयता के लोक में पहुंचा देता है। लोकगीतों के विषय, सामान्य मानव से सहज जुड़े हुए है। इन गीतों में प्राकृतिक सौंदर्य, सुख दु:ख और विभिन्न संस्कारों और जन्म मृत्यु आदि प्रसंगों को बड़े ही मार्मिक तथा हदयस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

हमारे तीज त्योहारों का प्रारंभ लोकगीतों से तो समापन भी उन्हीं से होता था। जीवन का कोई प्रसंग इससे अछुता नहीं। शादी ब्याह हो या होली दिवाली, या ऋतु आगमन हो दरअसल संगीतमयी वातावरण के कारण समय एवं श्रम दोनों ही हम पर हावी नहीं हो पाते थे तथा प्रसन्न वातावरण में कार्य सिद्धी हो जाती थी। एकांत से मुक्त हो जाते थे। मन से भी आत्मिक संतोष से परिपूण होने के कारण खुश रहते थे। सामूहिकता को बल प्राप्त होता था। शायद तनावमुक्त जीवन का यही राज था।चूंकि ८० प्रतिशत व्याधियाँ यह मनोशारीरिक कारणों से होती हैइसीलिए उस समय लोग मानसिक तथा शारिरीक रूप से स्वस्थ रहते थे। आज की परिस्थिति उस समय से बिलकुल विपरीत है।

लोकसंगीत यह समूहों का समूहों द्वारा, समूहों के लिए गाया जाने वाला ऐसा संगीत है। इस व्यख्या में समुह यह शब्द अति महत्वपूर्ण है। शास्त्रीय संगीत की तरह यह व्यक्तिगत नहीं होता। सामूहिक सुखदुख, जयपराजय, साहस, प्रकृति, ऋतु परिवर्तन, फसल, मंत्रतंत्र, जादुटोना, त्योहारों का आनंद, नाचगाना, भगवंत प्रार्थना, भजन इत्यादि विषय लोकसंगीत के अंतर्गत आते है। यह सभी भावनाएं लोकगीतों के माध्यम से आज तक जीवंत रूप में है। पं. ओमकारनाथ ठाकुर के अनुसार 'लोकसंगीत के माध्यम से समस्त विश्व में मानवता, आत्मीयता और एकता की स्थापना की जा सकती है। 'पानी का खुद का कोई रंग नहीं होता जैसा रंग मिलाया जाएगा वैसा वह हो जाएगा।' उसी प्रकार

लोकगीत भी अनेक रंगों से परिपूर्ण होता है। एक ही धुन पर निबद्ध कई गीत या कई धुनों में बंधा एक गीत, सहज सरल प्रस्तुति, स्फूर्ति से परिपूर्ण ऐसे गीत गाना लोकगीत की विशेषता होती है।

लोकसंगीत के प्रकार : लोकसंगीतसे साम्यता रखनेवाला गीत प्रकार नगर संगीत और लौकिक संगीत है। नगर संगीत के विकास के साथसाथ लोकसंगीत में भी अनेक परिवर्तन हुए। इसीसे लोकाभिमुख संगीत की निर्मिती हुई, उदा. भजन, प्रासंगिक गीत आदि इस तरह लोकसंगीत से दृढ़ संबंधजोड़ने वाला आदि संगीत तथा नगर संगीत है।

जातीय गीत : समाज के विभिन्न क्षेत्रों की विविध जातियाँ मनोनुकूल अपने ही गीत गाती है जिन्हें जातीय गीत कहते है। श्रोतागण उन्हें सुनकर अनुमान लगा लेते हैं कि गायक—गायिका किस जाति विशेष से संबंधित है।

गाथागीत/ लोकगीत : विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित विविध लोकगाथाओं पर आधारित इन गाथागीतों में मुख्यत: निम्न प्रकार आते हैं।

संस्कार गीत : बालक बालिकाओं के जन्मोत्सव, मुण्डन, पूजन, जनेऊ, विवाह, आदि अवसरों पर गाए जाने वाले संस्कार गीत है सोहर, खेलौनो, कोहबर, समुझ बनी, आदि।

पर्व गीत: राज्य में विशेष पर्वों एवं त्योहारों पर गाये जाने वाले मांगलिक गीतों को पर्वगीत कहा जाता है। होली, दिपावली, छठ, तीज, जिउतिया, बहुरा, पीडिया, गोधन रामनवमी, जन्माष्टमी तथा अन्य शुभ अवसरों पर गाये जाने वाले गीतों में प्रमुखत: शब्द, लय व गीतों में भारी समानता होती है।

पेशागीत: राज्य में विभिन्न पेशों के लोग अपना कार्य करते समय जो गीत गाते हैं, उन्हें पेशा गीत कहते हैं। उदाहरणार्थ गेहुँ पीसते समय जाँत—पिसाई, छत की ढ़लाई करते समय, थपाई तथा छप्पर छाते समय छवाई और इनके साथ ही विभिन्न व्यावसायिक कार्य करते समय सोहनी, रोपनी, आदि गीत गाते हुए कार्य करने का प्रचलन है।

विभिन्न प्रदेशों में लोकसंगीत के स्वरूप :— विशिष्ट संस्कृति से संबंधित वातावरण के कारण प्रत्येक प्रदेश में भिन्नता दिखाई पड़ती है तथा भारत में कई तरह के लोकगीत प्राप्त होने का यही एकमात्र कारण है। रविंद्रनाथ टैगोर के अनुसार 'संस्कृति का सुखद संदेश ले जाने वाली कला है लोकसंगीत।' लोकगीतों में विशिष्ट प्रदेशों के, प्रांतों की संस्कृति की छबी दिखाई पड़ती है। वहाँ के लोगों की बोलचाल, उनका व्यवहार, उनकी मानसिकता, उनका सर्वसाधारण व्यवसाय, उनकी आय, उनके आचार—विचार के विषय में सहज ही अंदाज वहीं के लोकगीतों से लगाया जा सकता है। लोकगीत यह भावनाओं को व्यक्त करने की प्रचंड उर्मी, इच्छा से निर्माण होता है। यह लोकगीत संपूर्ण समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। लोकगीत यह युगों से चले आ रहे संस्कृति के परिचारक होते हैं। ह्दय के वह साक्षात भाव शब्द—सूरों के माध्यम से हमारे सामने सगुणता लिए उपस्थित होता है तथा हमें भी उसमें समाहित करने की शक्ति रखता है। आत्मिक सौंदर्य को प्रदीप्त कर कार्य करने की प्रेरणा केवल लोकगीत ही दे सकते हैं। लोकगीत यह जीवन के सभी अंगों को स्पर्श करने वाला होता है। किसी भी वर्ग विशेष के सांस्कृतिक इतिहास का ज्ञान उसकी प्रथाओं, लोकविधाओं और गीतों का संकलित कर सहज ही लगाया जा सकता है। अपरिवर्तनीय रूप से जनसमुदाय के पास यह अमूर्त संस्कृति महान संपदा है, जिसकी झलक उनके त्योहारों और उत्सवों पर पाई जा सकती है। विश्व का कोई भी देश इसका अपवाद नहीं है।

एक प्रसिद्ध लोकोक्ति के अनुसार 'कोस कोस पे पानी बदले, चार कोस पे वाणी'। तात्पर्य यह है कि हर दो मील के अंतराल पर पानी का स्वाद परिवर्तित हो जाता है तथा आठ मील पर भाषा में परिवर्तन पाया जाता है। जिस प्रकार यह कहावत भाषा की भिन्नता दर्शाती है उसी प्रकार हमारे भारत में भी प्रदेशों के हिसाब से संस्कृति पर आधारित लोकगीतों में विभिन्नता दिखाई पडती है। भारत विशाल देश होने के

नाते विभिन्न बहुमूल्य लोक गीतों से भरा पडा है, ये गीत इस विशाल क्षेत्र पर बसे विभिन्न संप्रदायों की संस्कृति को प्रदर्शित करते है। भारतीय लोकगीत पौराणिक और परंपरागत कथाओं से गुंथे हुए हैं जिस कारण इनकी मान्यता सर्वव्यापक है। पीढ़ी दर पीढ़ी ये लोकगीत विरासत में मिलते हैं।

हिमाचल प्रदेश के लोकगीत पंजाबऔर हरियाणा के लोकगीतों से सर्वथा भिन्न है। हीर–राँझा, शीरी–फरहाद, लैला–मजनुँ की प्रेम कहानियाँ व परंपराएँ अभी भी दूरवर्ती पंजाब के लोगों के होंठों पर पाई जा सकती है। पंजाब के लोकगीतों में छडा, टप्पे का स्थान विशेष है। इन गीतों की संगत नृत्य व संगीत से होती है। राजस्थान का लोकनृत्य अभी भी वही अनुभूति और शौर्य प्रदान कर रहे हैं जो मुसीबत के समय राजपूतों और उनके स्त्रियों द्वारा दिखाए गए थे। राजस्थान के लोकगीतप्राय: साहसी और वीर रस प्रधान होते है। बानडा, गणगौर, लालर, माछर, घूमर के गीत, पटेल्या, बिछियों, गोरबंद, पणिहारी, पीपली, केवडी आदि लोकगीत राजस्थान में प्रसिद्ध है।

ऐसा व्यक्ति जो भगवान कृष्ण और राधा तथा गोपियों के बारे में जानने की रूची रखता है, वह उत्तरप्रदेश की यात्रा द्वारा खासकर ब्रजभूमि जहाँ रास, भ्रमर गीत, सोहर गीत, नकटा, निखाडी, तितिरा, गारी, लोरिया, बनरा, पंवारे, आल्हा, चनैनी, धिरबी, फागे, घाघ भडुरी, धुबयाऊ, ऋतु गीतों के अंतर्गत सैरे, राछरे, बिलवारी, दिवरी जैसे लोकगीत गाए जाते है। समय समय पर मुख्य रूप से होली, दिवाली, दशहरा और रक्षाबंधन आदि त्यौहारों पर इनकी निराली छटा को सुना जा सकता है।

महाराष्ट्र में पोवाडा, लावणी, अंगाई गीत, जोगवा, मंगलाष्टक, गोंधळ, ओव्या, विहीण, फुगडी, झिम्मा, कोळी गीत, आदिवासी गीत वहाँ की संस्कृति के दर्शन कराती है। वहीं गुजरात में हालरडा, रासगीत, गरबा, बाल कुदकणा इनके अलावा परमाती नाम का प्रकार ग्रामीण भागों में अत्यधिक प्रसिद्ध है जोकि रंगबिरंगी दुनिया से परिचय कराती है।

दक्षिण की तरफ जाने पर आप दक्षिण भारतीय लोक गीतों जैसे वचीपट्टु ललि, विल्लुप्पटु आदि लोकगीतों के संपर्क में आएंगे यदि आप इन्हें नहीं समझ पाते फिर भी निश्चित रूप से आप उनकी मिठी स्वर लहरी का आनंद उठा सकते हैं।उड़ीसा में दिंडा–भेंडा यह प्रकार मुख्य है और बिहार, असम और नागालैंड के भीतर हिस्सों के लोकगीतों की मधुरता झलकती है।

भारतीय संस्कृति इन विभिन्न प्रदेशों के लोकगीतों में बसे साकार स्वरूप के दर्शन व उनकी सूक्ष्म अर्न्तत्मा को पहचाना व देखा जा सकता है। अप्रविण व्यक्ति भी इनकी सादगी, भोलापन और माधुर्य को समझ सकते हैं, जो विभिन्न दृष्टिकोणों से समरूपता को लिए हुए है। २६ जनवरी की गणतंत्र दिवस परेड में पूर्णतया लोकगीतों की शोभा कोसहज ही अनुभव कियाजा सकता है। लोकसंगीत की कुछ विशेषताओं में परंपरागतता, सामूहिकता, मौखिकता, संमिश्र प्रेरणा, अनादि अनंतता, राष्ट्रीयत्व का आविष्कार वाद्यसंगीत का अभाव, विकार–विरोध व विकार क्षमता, राष्ट्रीय आविष्कार, भौगोलिक विशेषता, स्थलांतर क्षमता, प्रमुख रूप से माने जाता है।

लोकगीतों की सांगीतिक विशेषता :– साधरणत: लोकधुन चार पाँच स्वरों में सीमित होती है। कुछ ही धुनों में छह स्वर मिलतें है जिनकी संख्या निश्चित ही बहुत कम है।लोकधुनोंके स्वर समय के अनुरूप होते है। प्रात:काल, मध्यान्ह, सायंकाल, और रात्रि के प्रसंगाानुसार लोकधुनों में स्वरों का चयन किया जाता था जबकि तब संगीत का शास्त्र नहीं बना था फिर भी स्वरों की शक्ति से तो उस समय परिचय तथा अनुभव रहा ही होगा यही स्पष्ट होता है।लोकधुनों की स्वररचना प्रसंगानुरूप भी होती है। उन स्वरों के प्रसंग के अनुरूप भाव व्यक्त होता है। उदाहरण स्वरूप मध्यभारत के गाँवों की ओर कहीं कहीं बली का आयोजन किया जाता है। उस समय जो धुनें गायी जाती है उसकी स्वररचना में विभत्स भावों का संचार होता है। इसके अलावा झुले की धुनों में झुले के दोलन बहुत स्पष्ट और मार्मिक प्रतीत होते हैं। संगीत के सात्विक भाव

का निदर्शन लोकसंगीत के स्वरों द्वारा भलीभाँति किया जा सकता है। लोकसंगीत को सहज संगीत भी कहा जा सकता है क्योंकि यह अनुकरण मात्र से ही सीखा जा सकता है। किसी भी प्रकार का शास्त्रीय बंधन व नियम न रहने के कारण यह जनसाधारण के लिए भी सुलभ है।

लोकजीवन का सुंदर प्रतिबिंब लोकसंगीत मे दिखाई पडता है। उसमें लोकजीवन का सरल सा परिचय होता है। वे व्यक्ति के बाह्य जीवन के साथ साथ उसके मानसिक भावों के भी परिचायक होते हैं। परंतु उनमें सूक्ष्मता की अपेक्षा स्थूलता और स्पष्टता का अधिक महत्व होता है। लोकगीत संक्षिप्त, सरल, स्पष्ट, स्वाभाविक, सुंदर, अनुभूतिमय और संगीतमय होते है। शायदही ऐसा कोई लोक गीत हो जो संगीत से अनुप्राणित न हो। लोकसंगीत का संगीत भी लोकजीवन का उतना ही सफल परिचायक है जितनीकी उसकी कविता।

लोकसंगीत को भले ही मनोरंजन का साधन माना जाता हो पर उसके गीतों के द्वारा सामाजिक स्थिति, रीति रिवाज, सभ्यता—संस्कृति की झलक मिलती है। इस प्रकार लोकसंगीत ज्ञानवर्धन में भी सहायक है। लोकसंगीत विभिन्न भाषाओं और विभिन्न स्थानों के आधार पर भी पृथक—पृथक नाम व रूप धारण कर लेता है। यथा मिर्जापुर में कजरी, मारवाड़ में माँड, पूर्वी उत्तरप्रदेश में बिदेसिया, बिहुला आदि बहुत प्रचार में है।लोकसंगीत के अंतर्गत् ढोलक के गीत, प्राँतों में प्रचलित गीत, गाँवों में विशेष अवसर पर गाए जाने वाले गीत, आल्हा, भजन, फिल्मी गीत, गजल, कव्वाली, दादरा, होरी, बिरहा, बारहमासा आदि अनेक प्रकार के गीत आ जाते है। पूरे भारतवर्ष में प्रचलित लोकसंगीत की सूची ही अनेक पृष्ठ भर देगी। विवाह,पुत्र—जन्म आदि उत्सवों में गाए जाने वाले गीत आजकल प्रचार में तो है, पर फैशन के रूख को देखते हुए ऐसा प्रतित होता है कि इनका अस्तित्व अगर भविष्य में रहेगा भी तो कम से कम वर्तमान रूप में नहीं रहेगा। पाश्चात्य सभ्यता के प्रकाश में जिनकी दृष्टि चकाचौंध हो रही है उन्हें इस प्रकार के गीतों को अपने मूल स्वरूप में अपनाना अपना अपमान प्रतीत होता है वहीं आधुनिक जामा पहना दिए जाने पर उनके आकर्षण का केंद्र बन जाता है।

लोकसंगीत : शास्त्रीय संगीत की जननी लोकसंगीत ने अनेक दृष्टि से रागसंगीत अर्थात् शास्त्रीय संगत को पल्लवित किया है। नाटयसंगीत, ठुमरी, कजरी, बारहमासा आदि उपशास्त्रीय संगीत के प्रकार तथा भिन्न भिन्न धुन यह लोकसंगीत की ही देन है। लोकसंगीत के कुछ विषयों को रागसंगीत ने अपनाया है। शास्त्रीय संगीत की नींव हम लोकसंगीत में देख सकते है।

निष्कर्षत : हम पाते हैं कि भारत लोकगीतों के क्षेत्र का धनी है तथा इस कला का प्रसार दूसरे देशों में भी कर रहा है। विश्व स्तर पर अनेक देशों में सांस्कृतिक राजदूत विश्व को भारत के इस संचित धन से अवगत कराने तथा विश्व में आध्यात्मिक उत्थान और मनोरंजक उपलब्धियों की प्राप्ति में लोक गीतों के आदान—प्रदान के लिए एक दूसरे को प्रोत्साहित करने के कार्य में राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय रहें है, क्योंकि मनोरंजक होने के अलावा लोकगीत यह संगीत की आधारशिला होने के साथ ही शिक्षाप्रद भी है। वे आनंद के साथ शिक्षा और शिक्षा के साथ आनंद प्रदान करते है। इस बातको केंद्रित रख कर लोकगीतों का भारतीय युवाओं की सांस्कृतिक गतिविधियों में सम्मिलित कराना उनके जीवन की खुशहाली व सजीवता का प्रतीक होगा। यदि हमारा जनतंत्र राज्य शासन लोकसंगीत के सभी अंगों के विकास का एक ऐसा अनुशीलन प्रधान इतिहास निर्मित हो जाए, जिससे समस्त मानव जाति को प्रेरणा और लोकोत्तर आनंद प्राप्त हो सकेगा।

सामाजिकता को जिंदा रखने के लिए लोकगीतों, लोकसंस्कृतियों का सहेजा जाना बहुत जरूरी है। कहा जाता है कि जिस समाज में लोकगीत नहीं होते वहां का वातावरण कुछ शुष्क सा महसूस होता है। आज आधुनिकता, तकनिकी विकास के कारणहाथ चक्की के स्थान पर इलॅक्ट्रोनिक चक्की, कुएं से पानी खींच कर निकालने के स्थान पर विद्युत

पंप का उपयोग, बैलगाड़ी के स्थान पर मोटरगाड़ी, हल के स्थान पर ट्रेक्टर जैसे अन्य कई तकनीकि आविष्कारों से जहां मानव जीवन में सहजता थी वह अब धुमिल पड़ चुकी है। सामाजिक रचना के परिवर्तन ने, आधुनिकता की दौड़ ने विभक्त परिवारों के निर्माण में सहयोग दिया है जिससे लोकगीतों की मौखिक परंपरा धुमिल पडती दिखाई पड रही है। शादी, जन्मदिन इत्यादि अवसरों पर वाद्यवृंद, डी. जे.आकेस्ट्रा आदि ने अपना स्थान बना लिया है जिस वजह से जीवन में नीरसता, तनाव, अनेक व्याधियों की पकड़ समाज में बढ़ रही है। तकनिकी का प्रादुर्भाव तो हो रहा है साथ ही लोक कला, लोकसंस्कृति यह विलुप्त होते जा रही है। इस भुमंडलीकरण, वैश्वीकरण की आँधी में हमनें अपनी कलाओं को तहसनहस कर दिया है। हमारी संस्कृति अब आज की आधुनिक पीढ़ी को अनुपयोगी / बेकार सी जान पड़ने लगी है। इस विषय पर कुछ संस्थाएं लोकसंगीत की जीवंतता बनाए रखने के लिए अग्रसर हो रही है जिनके सक्रिय प्रयासों द्वारा लोकगीतों को सहेजने का काम चल रहा है। तमाम लोकगीतों को संग्रहित कर प्रकाशित करने के कार्य में भी अग्रसर है। संस्था महत्वपूर्ण कलाकारों के अन्वेषण में भी लगी हुई है और उसने महत्वपूर्ण कलाकारों की खोज भी की है।

डॉ. राजेंद्र प्रसाद के विचारानुसार आधुनिक जीवन को सुंदर, समृद्ध और सुसंपन्न बनाने में लोकसंगीत ही प्रभावपूर्ण रूप से सहायक सिद्ध होगा।लोकसंगीत यह भारतीय संगीत की अमूल्य निधि है। चूंकि हमारी इस लोकसंगीत रूपी सांस्कृतिक धरोहर को सहेजने संवारने एवं संरक्षित रखने के लिए इससे जुड़े कलाकारों एवं उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए सरकारी यंत्रणा हमारे आधुनिक प्रचार–प्रसार माध्यम भरकस प्रयत्नशील है फिर भी अंतर्मन के किसी कोने से यह आवाज उठती है कि हमारे यह प्रयास कुछ कम पड़ रहें है। जन साधारण की ओर से भी आकर्षण बढ़ना चाहिए जिससे इस अनमोल धरा से जुडे रहें।

संदर्भ ग्रंथ :

१.लोकसंगीत अंक, संगीत कार्यालय, हाथरस
२.संगीत निबंध माला – पं. जगदीश नारायण पाठक
३. संगीत शास्त्र विज्ञान भाग २ – डॉ. सुचेता बिडकर
४. संगीत निबंधावली – किरण फाटक
५. https://hi.m.wikipedia.org
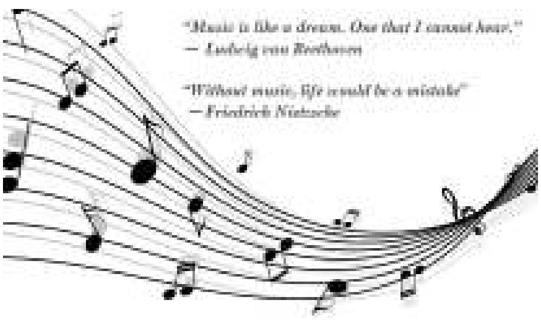
दृक संवाद आणि दृक विचारप्रसारणचा आशय आकलन करणारी दृकभाषा-एक अभ्यास.

Dr. M. Mohite
Associate Professor and
H.O.D. Fine Art Dept,
R.T.M Nagpur University
mohitemuktadevi@yahoo.com

प्रस्तावना :— संवाद साधण्यासाठी भाषेचा आणि लिपी चा उपयोग करतात भाषा आणि लिपीचा उगम ध्वनी आवाज, चित्रा हयातून झाला भाषा आणि लिपी च्या संशोधनाआधी सुद्धा संवाद—विचारप्रसारण क्रिया होत असणार आणि ती क्रिया हावभाव, शरीराच्या हालचाली आवाज ध्वनी संकेत हयाच्या द्वारे होत असत हा अमौखीक संवाद होय आणि भाषेद्वारे होणारा संवाद हा मौखिक संवाद होय. अमौखिक संवाद म्हणजेच दृक—संवाद. आणि त्यातून होणारे विचार प्रसारण हे दृक कलांच्या भूमिकेतून पार पडते.

भाषा व लिपी द्वारे होणारा संवाद हा अक्षर, शब्दआणि वाक्य हयातून प्रगट होतो शब्दांची योग रचना, की ज्यातून योग्य अर्थ बोध होणे आवश्यक असते म्हणजे वाक्यरचना ही फार महत्त्वाची ठरते. शब्दांची जुळवाजुळव ही व्याकरणाच्या नियमानुसार व्हावी अशी अपेक्षा असते. तर त्या वाक्यातून जो संवाद साधायचा आहे तोच श्रोत्या पर्यंत अचूक संदेश पोहचतो असाच अचूक संदेश व विचारप्रसारण श्रोत्यांपर्यंत दृकसंवाद क्रीयेतून पोहचावयाचा असेल तर दृक संवाद साधणारी दृक भाषेचा म्हणजेच दृक संवाद साधणाऱ्या दृक कलेचे घटक आणि संयोजन यांचा तांत्रिक दृष्टया ज्ञान असणे आवश्यक असते. दृक कलांची निर्मितीच मुळात संवाद साधण्यासाठी आणि संदश देण्यासठी झालेली आहे. परंतु त्याचा अर्थ बोध होण्यासाठी त्याच्या तांत्रिक दृष्टया म्हणजे एक प्रकारचीवाक्यरचनाच होय.

सर्व ललित कला—दृश्यकला आणि अभिनवकला (सादरीकरण कला) हया जनमानसातील हालचाली, हावभाव आवाज, ध्वनी याच्या आकलनातून तयार झालेली बोलीभाषा होय. हयातील सादरी करण कला नृत्य, नाटय आणि संगीत हया होत.

संपर्क वा संवाद साधने ही मानवाची मूलभूत गरज आहे. संपर्क साधनांच्या अभावी मानवाच्या संवदेना लोप पावतील व तो एकतर पशूच्या पातळीवर पोहचेल किंवा नष्ट होईल. कला ही अत्यंत खोलवरची आणि टिकाऊ अशी संपर्क क्रिया आहे.

सामान्य माणूस संभाषण व कृती यांच्याद्वारे संपर्क साधण्याचा प्रयत्न करतो, तर कलावंत आपल्या प्रतिकांद्वारा मानवी स्वभावाचा मूलाकार सर्वत्र व सर्वकाली सारखा असला, तरी त्यात व्यक्तिपरत्वे सारखे बदल होत असतात तीव्रतेने जाणवलेल्या भावना अगदी प्रभावी तऱ्हेने संक्रांत केल्यावरही क्षणिक टिकतात आणि नंतर बदलतात वा नाश पावतात तेव्हा कलावंत सुनिश्चित रुपे व प्रतीके यांची निवड करतो. त्यात भावना बद्ध होतात आणि विविध कालखंडात प्रतिसाद मिळण्याइतका टिकाऊपणा त्यांना लाभतो.

मानवी शरीरावर अवलंबून असलेल्या अतिशय आकारधारणक्षम अशा नृत्यकलेबाबत विशेष खरे आहे शिवाय नृत्य ही सर्वांत प्राचीन कला मानली जाते काहीही साधण्या आधी माणसाने श्वसन व हालचाल केली पाहिजे. हालचाल हा जीवनाचा उगम होय आणि आदिम जीवनास अत्यावश्यक असलेली हालचाल म्हणजे नृत्य होय.

नृत्य ही कलांची जननी होय. संगीत काव्य या कालत्म कला होत; तर चित्राकला व वास्तुकला या अवकाश बद्ध होत. पण नृत्य एकाच वेळी काल व अवकाश या दोहोत जगते. हालचालींचे लयबद्ध आकृतिबंध, अवकाशाची आकारिक संवेदना, पाहिलेल्या

आणि कल्पिलेल्या जगाची चित्रमय मांडणी, या साऱ्या गोष्टी माणूस नृत्याच्या द्वारे स्वतःच्या शरीरात उत्पन्न करतो कोणत्याही आंतरीक अनुभवास शब्द, पाषाण वा द्रव्य या माध्यमांचा वापर करुन साकार करण्या आधी ही प्रक्रिया घडत असते.

नृत्य म्हणजे मानवी जीवनातच नव्हे तर विश्वात आढळणाऱ्या सर्व साधारण लयीच्या आवाहनास व्यक्ति—विशिष्ट अशी होणारी मानवी प्रतिक्रिया होय. नृत्य हा अवकाशातला आकृतिबंध आहे. आणि वास्तू, चित्र व शिल्प या कलांप्रमाणे अवकाशबद्ध लय यात साधली जाते. त्याच बरोबर संगीताप्रमाणे त्यात कलात्म लयरचनाही केली जाते. श्राव्य व दृश्य अशा दोन्ही अंगाची लय साधणारी नृत्य ही एकमेव कला होय.

भाषेच्या उक्रांती आधी मानवाला खुणांच्या द्वारेच संपर्क क्रिया शक्य होती. नंतरही फार तीव्र व सूक्ष्म भावभावना व्यक्त करण्याच्या दृष्टीने भाषेचा अपुरेपणा त्याच्या ध्यानात आला. भावनावेगाने व दुःखावेगाने शब्द फुटेनासा होतो. पण शरिर हालचाली व खुणा यांच्या द्वारे अभिव्यक्ती करता येते.

हॅपलॉक एलिसने द डान्स ऑफ लाईफ (१९२३) या ग्रंथात मौलिक विचार प्रकट केला तो असाः—प्राचीन मानवी काळापासून धर्म आणि धर्मविषयक प्रेम या दोघांचाही आदीम अविष्कार नृत्यातून होत आला आहे. नृत्यकला ही मानवाच्या युद्ध, श्रम, सुख आणि शिक्षण यांच्या परंपराशी एकजीवपणे गुंफलेली आहे.

संगीत, नाटय, नृत्य या तिन्ही प्रयोगसिद्ध कलांच्या संदर्भात सुनिश्चित व तपशीलवार नियमांचा संच उपलब्ध असून या कलांची काही नियमांच्या पालनावर अवलंबून असते. हया नियमांच्या अभ्यासातून कलेचा विषय व त्यातून देणारा संदेश लोकांपर्यंत पोहचण्यास मदत होते. सादरीकरण करणारा तसेच श्रोता हया दोघांनाही त्यांचे ज्ञान असणे फार महत्त्वाचे आवश्यक असते.

भरताने दिलेल्या उपदेशात मुख्यत्वे करुन पुढील व्यक्तींचा अंतर्भाव होतो.

१) नाटककार :— नाटयलेखनात वापरण्याची भाषा, निरनिराळया नाटयप्रकारांची लक्षण व त्यांच्या बांधणीचे विश्लेषण.

२) रंगमंच व्यवस्थापन व दिग्दर्शक :— त्याची पात्रता, त्यांनी पार पाडण्याचे धर्म विधी, त्यांची कर्तव्ये इत्यादी.

३) नट आणि नटी :— त्यांची पात्रता, शारीर गुणधर्म, कुशलता, पात्रलेखन, पात्रयोजना इत्यादी.

४) पूजा व इतर प्रास्ताविकः— हिंदू तत्वविचारास अनुसरुन रंगमंचावर सादर होणाऱ्या गोष्टींशी संबंधीत सर्व विधी इत्यादी.

५) प्रेक्षागृहः— परिणामे, बांधणी आणि वास्तुशांतीसाठी करावयाची धर्मकृत्ये,

६) रंगपट व्यवस्थापक :— विविध पात्ररेखांच्या रंगभूषा, वेशभूषा इत्यादी.

७) संगीत :—रंगमंचावर सादर होणाऱ्या नाटयप्रयोगास आवश्यक साथ—संगत, गायन, वादन, इत्यादींविषयीचे सर्वसाधारण औपत्तिक विवेचन.

८) नृत्य : स्त्रीपुरुषांसाठी योग्य त्या नृत्यास हालचाली व त्यांचे वर्गीकरण.

यावरुन भरताच्या काळात नाटयात नृत्य व नृत्त ही नर्तनाची दोन्ही अंगे व संगीत यांचा अंतभार्व होई. नाटयाची व्याख्या जगातील लोकांच्या सुखदुःखांसारख्या दैनंदिन अनुभवांच्या आंगिक, सात्विक इत्यादी अंगातून होणाऱ्या अनुकरणास नाटय असे म्हणतात.

भारतीय नाटयाचा प्रयोग हा बोलले जाणारे शब्द वाचिक, हावभाव व शारिर हालचाली आंगिक, वेशभूषा व रंगभूषा आहार्य, मानसिक अवस्थांचे प्रकटीकरण — सात्विक, गीते (गीत) आणि नृत्ये— नृत्त, इ. निरनिराळया घटकांच्या साहाय्याने होत असे.
नाटय प्रयोगाच्या प्रस्तुतीकरण तंत्राचे स्वरुप
तंत्रा — नाटयाच्या तंत्राचा अराखडा

धर्मी :— प्रस्तुतीकरणाचे मार्ग लोकधर्मी आणि नाटय धर्मी अशा दोन धर्मीचा निर्देश केला आहे लोकधर्मी म्हणजे लोकांचे नैसर्गीक वर्तन रंगमंचावर जेव्हा प्रस्तुत केले जाते ते लोकधर्मी, आणि प्रस्तुतीकरण सांकेतिकरण

वा निश्चिती शैली करणारे करतात ती नाटयधर्मी होय. लोकधर्मी हा अधिक वास्तववादी असा प्रस्तुतिकरणाचा मार्ग असतो व त्यामुळे दैनंदिन जीवनाचे त्यात प्रतिबिंब दिसते तर नाटय धर्मी अधिक संकेतिक मार्ग असून तो पुराणकथा इत्यादींच्या प्रस्तुतीकरणास अधिक योग्य असतो

वृत्ती – रचना शैली :– नाटयशास्त्राच्या बाविसाव्या अध्यायनात

१) भारती – (शब्द श्ब्द) – बोलल्या जाणाऱ्या शब्दाचा अधिक उपयोग करुन घेणाऱ्या रंगमंचीय प्रस्तुतिकरणाच्या रचनाशैलीस 'भारती' म्हणतात.

२) सात्वती :– सामर्थ्य आणि उदात्त कल्पना यांच्या प्रस्तुतीकणासाठी हावभाव आणि बोलला जाणारा शब्द यांचा उपयोग करणारी ती सात्वती शैली होय वीर, अद्भूत व रौद्र या रसांचे ती आवाहन करते.

३) आरभटी :– (चैतन्ययुक्त) शूर व्यक्तींची धाडसी कृत्ये रंगमंचावर जिच्या साहाय्याने प्रस्तुत करतात ती आरभटी वृत्ती होय. भय, बीभत्स व रौद्र रसांचे ती आवाहन करते.

४) कैशकी :– (शैलीदार) :– बहुधा स्त्रियांनी परिधान केलेले मनोहर वेष, संगीत–नृत्याचा भरपूर वापर व प्रेमप्रकरणांशी निगडित कल्पना असलेल्या वृत्तीस कैशकी म्हणतात. शृंगार व हास्य रसांचे ती आवाहन करते.

अभिनय :– अनुकरण, नक्कल वा प्रस्तुतीकरण होय. 'अभि' म्हणजे जवळ किंवा च्याकडे 'नी' म्हणजे नेणे अशी अभिनय या शब्दाची व्युत्पत्तीमधील फोड आहे. रंगमंचापासून प्रेक्षकांपर्यंतनेण्याच्या या क्रियेचे रुप अनुकरणाच्या वा मुकाभिनयाच्या धारणीचे असते. रंगमंचावरील प्रस्तुतीकरणातील कल्पना वा विषय प्रेक्षकांपर्यंत न्यावयाचा असतो.रंगमंचीय प्रस्तुतीकरणातील कल्पना वा विषय १) आंगिक व शारीर हालचाली २) वाचिक –बोलला जाणारा शब्द इत्यादी. अभिनयाच्या द्वारे प्रेक्षकांना अवगत होतो. नट आदी प्रयोगकर्त्यांद्वारा विषय प्रेक्षकांपर्यंत पोहोचविण्याची क्रिया पार पडली जाते.

प्रेक्षकांच्या मनात अर्थाचे अवतरण घडविणे, हे अभिनयाचे उद्दीष्ट असून अर्थ अवगत झाल्यामुळे प्रेक्षकाचे हृदय परिवर्तन होते त्याच्या इतर अटी पुऱ्या झाल्यास 'रस' निर्माण होतो केवळ नाटयाचेच नव्हे तर सर्व कलांचे हे उद्दीष्ट आहे.

कला ही आपल्या आकर्षक व सुंदर रुप बंधाद्वारा उपदेश आणि संदेश या दोन्हीचेही वहन बनते या पार्श्वभूमीवर नृत्यकलेच्या संदर्भात पुढील द्विघटकयुक्त सूत्र मांडलेले आहेत.

नृत्याचा आशय भारतात धर्मपर आणि तत्व पर विचार हाच राहिला आहे. नृत्याचे रुप ही संकल्पना अधिक मूर्त होय हे रुप बदलते राहिले आहे. परंतु नृत्याचा आशय मात्र तोच राहिलेला दिसतो.

चतुर्विध अभिनय :– अभिनय म्हणजे कृती वा अर्थवाहकता (कम्युनिकेशन) अधिक नेमकेपणे बोलावयाचे तर नटाने आशयवहनासाठी घडवून आणलेली कृती होय. दैनंदिन जीवनातील गरजांशी निगडित असलेल्या मानवी व्यवहारांनी आशयवहनाची ही क्रिया निश्चित व नियंत्रित होत असते. त्यमुळे अभिनयात विविधता निर्माण होते. पारंपारिक दृष्टया मानवी व्यवहाराचे मन, वाचा, आणि अंग असे वर्गीकरण केले जाते. मानवी व्यवहाराच्या याच त्रिविध वर्गीकरणातून सात्विक, वाचिक, व आंगिक या अभिनयप्रकारांचा उगम झाला आहे. आणि म्हणूनच अभिनय म्हणजे केवळ चेहऱ्याची किंवा हातापायाची अवयवांची हालचाल नसून तो संपूर्ण मानवी व्यवहारच होय.

मानवी स्वभावाची अनुकृती व्हावी म्हणून नाटकात सत्वाभाव असणे इष्ट, आहे. मनात उगम पावणारा सात्विक अभिनय नृत्य वा नाटय यात उपयोजला जातो कारण त्यात मानवी जीवनाची अनुकृती असते.

सात्विक भाव ही मानसिक अवस्था असल्यामुळे दैनंदिन जीवनात असो वा कलाविष्कारात असो, नाटयाप्रमाणेच नृत्यातही नर्तकाला त्याची अत्यंतिक गरज भासते. सात्विक भावांमधून व्यक्त होणारा सात्विकाभिनय हा नृत्यप्रसंगी नर्तकापासून निर्माण होणाऱ्या तिव्र भावावस्थेचे मूळ असून, त्यामुळेच प्रेक्षकाच्या

ठिकाणी होणाऱ्या तीव्र भावयुक्त अवस्थेचे मूळ असून, त्यामुळेच प्रेक्षकाच्या ठिकाणी रसनिर्मिती होत असते.

हे सात्विक भाव नर्तकाच्याद्वारे फक्त प्रतिबिंबित होतात असे नव्हे तर सर्व अवयवांच्या किंबहुना संपूर्ण शरीराच्या द्वारा ते प्रतिबिंबित होत असतात, उदा. (डोळे, भुवया, चेहऱ्यावरचे स्नायू व एकूणच शरीर यांच्या मदतीने रतिभाव हा शृंगार रसाची उत्पत्ती करतो.) सौंदर्ययुक्त, सार्वत्रिक, अव्यक्तिगत परंतु तीव्रोत्कट मानवी पातळीवरील आठ स्थायी भाव आणि त्यापासून उद्‌भवणारे आठ रस भरताने सांगितले आहेत.

स्थायीभाव रती, हास, शोक, क्रोध,
उत्साह, भय, जुगुप्सा, वित्मय
रस शृंगार, हास्य करुण, रौद्र,
वीर, भयानक, बीभत्स, अदभुत
(शांती) (शांती)

भत्तिपंथाच्या उदयानंतर शांत रस या नवव्या रसाची त्यात भर पडली.

अंगिक अभिनय :— हा अभिनय प्रकार शारीरिक व्यवहार आणि हालचाली यांच्याशी संबंध असून तो हावभाव वा अंगविक्षेप विशिष्ट शरिरवस्था यांच्या द्वारे व्यक्त होतो. भरताने नोंदलेला तपशीलाप्रमाणे

वाचिक अभिनय :— नाटयाच्या प्रस्तुतीकरणात वेषभुषा, अलंकार, रंगभूषा, इत्यादींच्या वापराशी अभिनयप्रकाराचा अंतर्भाव होतो. सांगितिक स्वर, त्याच्या कमी—अधिक उच्चत्ता, उच्चारण, उच्चारभेद इ. गोष्टी या संदर्भात महत्त्वाच्या मानल्या जातात.

आहार्य अभिनय:— नाटय प्रस्तूतीत वेशभूषा, अलंकार, रंगभूषा इत्यादींच्या वापराशी या अभिनयप्रकाराचा संबंध असतो. विविध प्रकारची पात्रे निररनिराळया पेशांतील, प्रांतातील इ. त्या त्या प्रांताच्या वैशिष्टयांनुरुप शैलीबद्ध वेषभूषा वगैरे करतात. भारतियांची अलंकाराची आवड प्राचीन काळापासूनची आहे. कोणी कोणते अलंकार केव्हा घालावेत, याविषयी निश्चित संकेत रुढ झाल्याचे शिल्पशासनावरुन विशेषत: त्यातील प्रतिमावर्णनावरुन दिसून येते. नाटय शास्त्र व विष्णु धर्मोत्तर पुराण यात विशिष्ट रंग व विशिष्ट रस यांचीही सांगड घातलेली दिसते. आहार्य अभिनयाच्या संदर्भात प्रांतीय परंपरेचा घटकही फार महत्त्वाचा ठरतो. निरनिराळया जातींमध्ये, वंशामध्ये चालीरीती, पोशाख इत्यादींच्या विशिष्ट परंपरा रुढ असतात. त्यामुळे वेगवेगळया प्रदेशांतून अवतरलेल्या प्रांतानी त्या त्या प्रदेशातील पारंपारीक रुढ अलंकार व वस्त्रे — परिधान करावीत.

नाटकापेक्षा नृत्यातील शरीर हालचाली अधिक अभिव्यक्तिक्षम व जोमयुक्त असतात. त्यामुळे या अभिव्यक्तीला साजेशी आणि सुसंवादी वेशभुषा आवश्यक ठरते. नाटकात भावनांची अभिव्यक्ती मुख्यत: मौखिक शब्दांद्वारे होते. व त्यास पूरक म्हणून शरीर हालचालीची जोड दिली जाते. नृत्यात त्याच्या अगदी उलट स्थिती असते. नृत्यात अभिव्यक्तीसाठी नर्तकाला शरिर हेच मुख्य माध्यम उपलब्ध असते. त्यास काही वेळा उच्चारित शब्दांची व गायन वादनाची जोडी दिली जाते. तथापि नृत्य जे साकार होते ते मुख्यत्वे शारीरिक हालचालीतूनच त्या दृष्टीने नर्तकाचा आहार्य अभिनय हा बहुद्देशीय असतो.

नाटय आणि नृत्य (वृत्तासह)यातील भेद स्पष्टपणे दिसतो दोन्ही मध्ये वाचिका, आंगिक आहार्य, सात्विक हेच चार अभिनय प्रकार आणि दोन धर्मी आणि वृत्ती असतात पण उपयोजनाचे प्रमाण निरनिराळे असते. नाटयात सात्विक अभिनय, भारतीय वृत्ती यांचा विशेष अवलंब केला जातो. वाचिक अभिनयात नाटयधर्मीचे प्रमाण कमी असते आणि नाटकात आंगिक अभिनयाचा वापर केवळ पुरक म्हणून रसनिर्मितीस सहाय्यक म्हणून केला जातो. याउलट नृत्यात आंगिक अभिनय व कैशिकी वृत्ती यांवरच भर असतो काही प्रमाणात आरभटी वृत्तीही महत्त्वाची ठरते. नृत्यात वाचिक अभिनय नसल्यामुळे सात्विक अभिनय देखील आंगिक अभिनयाद्वारेच व्यक्त करावा लागतो. त्यामुळे त्यात नाटयधर्मीवरचे व संगीतावरचे अवलंबन अधिक प्रमाणात असते. परिणामत: दिर्घकथनात्मक, विश्लेषणात्मक विवरणात्मक अर्थप्रकारणासाठी नाटय सोयीचे, तर साधे कथन करण्यासाठी नृत्य सोयीचे असे ढोबळपणे

म्हणता येईल दोघांमध्ये रसनिर्मिती हेच समान अंतिम उद्दिष्ट असूनही नृत्य हे आंगिक प्राधान्य, तर नाटय हे सात्विक प्राधान्य.

नृत्य—नाटय कलेतून संवाद साधला जातो परंतु श्रोता, आणि सादरीकरण करणाऱ्याला नाटय नृत्याची भाषा आणि त्याची वाक्यरचना यांचा अभ्यास म्हणजेच त्याचे तत्व आणि तंत्र, शास्त्र हयांची जाण असणे अत्यावश्यक आहे. तरच सादरीकरणारा (प्रकटीकरण) करणारा अर्थयुक्त संदेश देण्याचे कार्य करु शकले तर श्रोता वर्ग सुनिश्चित संदेश ग्रहण करेल भाव—भावनांचे आदान प्रदान योग्य रितीने होईल.

तसेच दृक कला—चित्रकला, शिल्प, व वास्तू हया अवकाशबद्ध कला अनेक काळापर्यंत टिकणाऱ्या कलांना समजण्यासाठी आणि समजवण्यासाठी भाषा आहे. आणि भाषा त्याची वाक्यरचना श्रोता वर्गाला आणि प्रगटीकरण करणाऱ्याला त्या भाषेचे स्वरुप त्याचे तंत्र, शास्त्र याचा अभ्यास असणे आवश्यक असते.

दृक कलेची निर्मिती प्राचिन काळापासूनच प्रागौतीहासक काळापासून झाली आहे. जशी जशी मानवाची प्रगती होत गेली त्याप्रमाणे कलांची प्रगती झाली व दृककलेला साकारण्यासाठी काही घटक तंत्र, तत्त्व, शास्त्र संयोजन हयाचे कला संशोधकांनी (समीक्षकांनी) आखले आहे त्यांचे ज्ञान श्रोता वर्ग कलानिर्माता हया सर्वांना आवश्यक आहे.

प्राचिन मानवाने तयार केलेल्या कलाकृती चीत्र, शिल्प, वास्तू हया कला त्याने शास्त्र तंत्र, तत्वे, हयाचा अभ्यास नसतांना त्याने कळत नकळत त्या कलाकृती त्याच्या मानसिकते प्रमाणे व दैनंदिन कार्याच्या अनुभवाने तसेच काही सांगणे (संदेश देणे) काही आयोजन करण्याचे दृष्टिकोनातून केलेल्या आहेत तरीही त्यांनीच वापरलेले बिंदु रेखा, आकार, रुप, रंग, पोत छयाभेद यांना आपण शास्त्रीय दृष्टया कलेचे घटक असे आधुनिक मानवाने, संशोधकाने शास्त्रीय स्वरुप दिलेले आहे. कलेच्या इतिहासानुसार गुप्त काळ हा कलेच्या प्रगतीसाठी सुवर्णयुग ठरला. त्या काळातील चित्र निर्मित म्हणजे ४ ते ५ व्या शतकातील अजिठयांचे भित्ती चित्र होय.

वास्तायनाच्या कायसूत्रात ६४ कलांची यादी दिलेली आहे चौथ्या क्रमांकावर 'आलेख्या' म्हणजे चित्रकलेचा उल्लेख आहे या ग्रंथावर एक टिकात्मक ग्रंथ 'जयमंगला' यशोधराने लिहिला आहे. त्या ग्रंथात चित्राकलेतील सहा अंगाविषयी एक श्लोक आहे. (यशोधराचा काळ इ.स. १३ वेशतक)

रुपभेदा:, प्रमाणनि, भावलावण्ययोजनम्।
सादृश्यं वर्णिकाभंड्ग इति चित्र षडगकम्।

रुपाचे निरनिराळे प्रकार, प्रमाण, भाक्लावण्य याची योजकता केलेली सादृश्य (सह—दृष्य) वर्ण रंग, वर्णिचे प्रकार (वर्णिका म्हणजे ब्रश अशा सहा अंगानी चित्र बनते तसेच दृकलेतील शिल्प आणि वास्तु कलेशी सुद्धा उपयुक्त ठरतात.

हया षडांगांच्या आधारातून, दृक कलेचे घटक आणि कला संकल्पाचे मुलभूत तत्व कला संशोधकाने दृककला शास्त्रा म्हणून निर्मित केली कलेचे घटक बिंदु, रेषा, अकार, रुप, रंग, छायाभेद आणि पोत.

हे घटक म्हणजे दृक भाषेचे शब्द होय हया शब्दांपासून अक्षर निर्मिती होते की त्यातून भावनांचे, विचारांचे, तसेच सात्विक अभिनयातील स्थायी भावातील आठ रस त्यात एक मवना रस शांत रस हयाचे आकलन आशय मुक्त कलाकृती करणारा कलाकार श्रोत्यांपर्यंत भावना, विचार संदेश पोहोचवतो. तो आशय आणि रसनिर्मितीसाठी योग्य रीतीने अक्षरांची योजना व्हावी आणि म्हणजेच त्या घटकांची मांडणी साठी, संकल्पना निर्मिती ;क्रमेपहदद्ध साठी १२ तत्व आहे. १)पुनरावृत्ती २) विविधता ३) विरोध ४) उत्सेर्जन ५) लय (ताल) ६) तोल ७) श्रोणीक्रम ८) प्राधान्य व गौणत्व ९) प्रमाण १०) संक्रमण ११) संवाद १२) एकात्मता

म्हणजेच कलेचे घटकांचा आणि १२ संकल्प तत्वांचा योग्यतेनुसार वापर करणे म्हणजेच शब्दांची, अक्षरांची योग्य वक्यरचना होणे आणि संकल्प तयार करणे.

रेषा(Line) :— रेषेची अथवा हस्ताक्षर लेखनाची खुण मोकळया जागा, वस्तू, घनाकार, रंग किंवा छायाभेद यांना मर्यादीत करणारी कक्षा (बाहयकाराची रेषा) असते रेषेला सौंदर्य आहे जिवंतपणा आहे, स्वतंत्र असे व्यक्तित्व आहे. प्रत्येक रेषा स्वतंत्र भाव निर्माण करते वेगवेगळया आकाराच्या रेषांनी आकाराची निर्मिती होते. रेषेच्या आकार जसा जसा बदलत जातो तस तसा भाव आणि आणि आशय बदलत जातो.

आकार आणि रुप (Shapeand tovm) :— पातळीची अथवा क्षेत्राची सपाट व्यक्ती म्हणजे आकार, पातळीची अथवा क्षेत्राची द्विमित अथवा त्रिमित व्याप्ती म्हणजे रुप, धन आणि ऋण क्षेत्र यांना मर्यादित करणारी कक्षा म्हणजे रुप, चित्र, शिल्प व वास्तुकलेत आकारांना महत्त्व आहे.

छायाभेद (Tone) :—छायाभेदाच्या परस्परसंबंधाना छायाभेद म्हणतात. छायाभेदाच्या प्रकाराच्या तीव्रतेतून वेगवेगळया टप्यात विभाजन होते. तीव्र प्रकाश, माध्मप्रकाश, छाया परावर्तीत प्रकाश, पडछाया, छायाभेदाचा उपयोग करुन सपाट पृष्ठभागावर कोणत्याही, वस्तुचे वास्तव दर्शन घडविता येते वस्तूचा त्रिमित भास निर्माण करता येतो.

रंग(Colour) :— वनस्पती प्राणी आणि खनिज पदार्थापासून रंगविण्यासाठी बनविलेले द्रव्य म्हणजे **रंगद्रव्य (Pigment)**

रंगव्याख्या :— कोणत्याही पृष्ठभागाने प्रकाश वर्णपटातील इतर किरणे सामावून घेऊन परावर्तित केलेली दृक—किरणे म्हणजेच रंग होय. एक किंवा अनेक प्राथमिक द्रव्ये ;च्पहउमदजद्ध तांबडया, निळया व पिवळया अथवा यांच्या मिश्रणाने निर्माण होणारी मिश्रणे म्हणजे रंग होय.

रंगाची वैशिष्टये गुणधर्म :— १) रंगनाम २) रंग छटा ३) रंग क्रांती अथवा तेजस्विता (Chroma or Intensity)

१. एक रंग दुसऱ्या रंगापासून वेगळा आहे या ओळखी रंगाला ठरविलेले नाव म्हणजे रंग नाम.

२. रंगातील कमी जास्त उजळपणा व गडदपणाच्या दिसणाऱ्या फरकाला रंगछटा ;टंसनमद्ध म्हणतात.

३. रंगाच्या कमी अधिक तेजस्वितेच्या प्रमाणास रंगकांती म्हणतात मुळ रंगात करडा रंग मिसळल्यास रंगकांती बदलते. रंगाचा तेजस्वीपणा करडया रंगाच्या प्रमाणावर बदलतो.

रंगकांतीमुळे रंगाच्या गडद व फिक्या छटांमुळे रंगाचा दृक अनुभव येतो.

१) दृष्टीभ्रम (Illusion) २) विलंबित प्रतिमा ;ंजजमत हमद्ध ३) विरोधाभास (Simultaneous cantrast) दृश्यमानता(Visibility) ६) अवधानशक्ती ;ंजजमदजपअम चूमत ७) केंद्रिकरण (Tocussing) करडा रंग, तेजस्वि रंग व उबदार रंग अशा रंगाचे चौकोन रंगविले असता तेजस्वी रंग पुढे आलेले वाटतात व करडया रंगाचे चौकोन मागे गेलेले भासतात करडा रंग दुरचे अंतर भासवितात यालाच दृष्टीभ्रम म्हणतात.

पोत :— (Texture) काही पृष्ठभाग गुळगुळीत, मऊ तर काही खरबरीत असतात अशा पृष्ठभागाच्या प्रकारांना पोत असे म्हणतात त्याचे दोन प्रकार स्पर्शजन्य पोत (Tactile texture) दृक —पोत (visual Texture) आहे.

दृक कलेचे मूलभूत घटक म्हणजे रेषा, रुप, छायाभेद, रंग पोत यांची विचारपूर्वकव चित्रातील अवकाशात सुसूत्रता, संवाद, निर्माण होईल अशी वेधक मांडणी करणे म्हणजे संयोजन.

संकल्प व रचनाकृती तयार करीत असतांना कलेच्या मूलभूत घटक रेषा, आकार, रुप, छायाभेद, रंग व पोत परंतू भावनाप्रधान, आशययुक्त, वातावरण—निर्मित करणारे संकल्प किंवा रचनाकृती तयार करीत असतांना कलेच्या मूलभूत घटक, रेषा, आकार, रुप छायाभेद व पोत यांचा उपयोग तयार करतोच परंतु संकल्प किंवा रचनाकृतीत वेधक, आकर्षक कलात्मक, बनविण्यासाठी तिची मांडणी योजना अथवा संयोजन काही तत्वावर करावी लागते.

संकल्पवरचनाकृतीच्या संयोजनाची तत्त्वे :—

पुनरावृत्ती (Repition) एक वा अनेक आकार

अथवा रुप (Form) बाहयाकार वा अलंकारिक घटकांची विशिष्ट पद्धतीने नियमित योजनाबद्ध पुन:पुन्हा मांडणी केल्यास त्याला पुनरावृत्ती म्हणतात. पुनरावृत्तीमुळे आकारांचा सुसूत्र आकर्षक आकृतिबंध बनतो व चित्रात लय व गती निर्माण होतो.

विविधता वैचित्र्य(Varicty) : चित्र –शिल्प –वास्तुच्या रचनाकृतीत त्याच त्याच घटकाच्या सततच्या पुनरावृत्तीमुळे तोच तोपणा येतो व त्यामुळे कंटाळवाणे पणा निर्माण होतो. व तो टाळण्यासाठी वेगळी कल्पना अथवा गुणधर्म व वैशिष्टये असणाऱ्या घटकाच्या साहयाने थोडेफार रुपांतर व फेरबदल करतात यालाच विविधता म्हणतात.

विरोध आणि उत्सर्जन (Control and Radiation) – कोणत्याही रचनाकृतीला किंवा संकल्पाला पुनरावृत्ती व विविधते प्रमाणे विरोधाचीही आवश्यकता असते. विरोधी स्थळ, दिशा व परस्पर वैशिष्टये व गुणधर्म दर्शविणाऱ्या वस्तूंना अथवा घटकांना परस्परांचे विरोध म्हणतात कारण त्यातून संपूर्ण वेगळेपणा व भिन्नता स्पष्ट होतो.

लय आणि तोल (Rhythm and Balance) -

कोणत्याही कलाकृतीत लय निर्माण करण्यासाठी घटकांची रेषा, आकार, छायाभेद रंग व पोत त्यांच्या पुन: पुन्हा रचना करुन पुरावृत्ती निर्माण करुण एका ठिकाणाहुन दुसऱ्या ठिकाणी सहजतेने नजर फिरते व गती निर्माण होते या गती निर्माण करणाऱ्या सुसंगत व सुसंबद्ध मार्गाला लय म्हणतात.

कोणत्याही संकल्पात किंवा रचनाकृतीत सारख्या वजनांच्या किंवा वेगवेगळया असमान वजनांच्या घटकांचा दृक –समतोल साधुन संवादपूर्वक केलेली योजना म्हणजे तोल. कलाकृतीत तोल साधला नसेल तर त्यात अस्थिरता निर्माण होते.

श्रेणीक्रम आणि प्राधान्य व गौणत्व

(Gradation, Prominance, and Subordination) : जवळपास सर्वसाधारण गुणधर्म व वैशिष्टये असणाऱ्या एकमेकांशी संबंधित असणाऱ्या रेषांचे, आकारांचे, छायाभेद, रंग, व पोत यांचे क्रमवार संघटन करण्यास श्रेणीक्रम असे म्हणतात. श्रेणी क्रमामुळे कलाकृतीत गती, लय, व गोडवा निर्माण होतो.

एखाद्या संकल्पात किंवा रचनाकृतीत लक्ष केंद्रित व आकर्षित करणे व लक्ष खिळवून ठेवायचे असेल तर रंग, रेषा, आकार, छायाभेद, किंवा पोत याला प्राधान्य देऊन रचना करणे आवश्यक असते. इतकेच नव्हे तर त्या घटकांना प्रमुख प्राधान्य दिलेल्या अवकाशाशी संवाद राखू शकतील एवढे योग्य गौणस्थान देणे आवश्यक आहे. गौण स्थानामुळे प्राधान्य दिलेला घटक ठसठशीतपणे उमटून दिसतो व लक्ष वेधून घेतो प्राधान्य व गौणत्व हे तत्व रचनाकृतीचे व संकल्पाचे महत्त्वाचे अंग आहे.

प्रमाण आणि संक्रमण (Propotion and transition) कोणत्याही कलाकृतीत विविध आकार व आकारमानाच्या द्विमित व त्रिमित क्षेत्रांचा, एका आकाराचा दुसऱ्या भागाशी, एका घनाकाराचा दुसऱ्या घनाकाराशी, अथवा एका घटकाचा दुसऱ्या घटकाशी तसाच पार्श्वभूमीच्या मोकळया जागेशी आणि रंग रेषा व छायाभेदाचा एकमेकांशी जो तैलनिक सुयोग्य संबंध असतो त्यालाच प्रमाण म्हणतात. प्रमाण जेवढे सुयोग्य असेल तेवढी ती कलाकृती सौंदर्याचा उत्तम अविष्कार करील व सुंदर दिसेल.

कोणत्याही दृक–कलाकृतीत संक्रमण फार आवश्यक आहे. लय आणि पुनरावृत्तीच्या वारंवार येण्याने हळुवार बदलाला व एका स्थानापासून दुसऱ्या स्थानापर्यंतचा सहजनतेने मार्ग क्रमण करण्याच्या डोळयांच्या क्रियेला संक्रमण म्हणतात. या संक्रमणामुळे चित्रातील डोळयाचा मार्ग ठरतो व त्यात गती निर्माण होते. त्याच्यामुळे दृष्टी पुर्ण कलाकृतीवर हळूवार फिरते व कलाकार संक्रमणाद्वारे आपल्या इच्छेप्रमाणे प्रेक्षकाचा डोळा चित्रांतील विविध घटकांवरुन फिरवतो. व कलाकार आपला मुख्य उद्देश कलाकृतीद्वारे साध्य करतो.

संवाद आणि एकात्मता (Harmony and unity) : एकात्मतेप्रमाणे रचनाकृतीत संवादाची आवश्यकता आहे. विविध कल्पना, रेषा, आकार, छायाभेद, पोत व रंग या कलेच्या मूळ घटकांत व रचनाकृतीत वापरलेल्या

इतर रचनाकृतीच्या तत्त्वांशी मित्रत्वाच्या, सलोख्याच्या व सहकार्याच्या संबंधातून तोल सांभाळून केलेल्या सुसंगत आयोजनाच्या एकत्रित परिणामाला संवाद अथवा मेळ असे म्हणतात. रचनाकृतीतील व एकात्मता यांच्या आयोजनात सम्यकपणे व विविध घटकांत सुसंगत्वावर साधलेल्या कलात्मक परिणामाला मेळ अथवा संवाद म्हणतात.

एकात्मता ही कोणत्याही कलाकृतीतील प्रमुख व अत्यंत महत्त्वाचे तत्त्व आहे. कुठलीही कलाकृती बघतांना मानवी मन गोंधळू नये म्हणून दृश्य आणि अविष्काराच्या स्वरुपात विविध घटकांच्या विशिष्ट क्षेत्रांत सुसंबद्ध व योग्य प्रमाणात समन्वय साधून तसेच त्यांची वेधक मांडणी करुन सर्व घटकांतून एकत्वाचा सम्यक परिणाम साधण्यास सर्वांतून एकात्मता निर्माण होते व ती कलाकृती रचनाकृतीच्या दृष्टीने विलोभनीय होते व परिपूर्ण होते.

सर्व ललित कला आणि समाज व्यवस्था समाजातील होणाऱ्या घडामोडी हया सर्वांच्या अभ्यासातून समाजाच्या हिताची आवश्यकतेची आणि सर्व विद्या, विज्ञान कला म्हणजे जाहीरात कला. आज आधुनिक काळातील विज्ञापन प्रत्येक व्यक्तिची, समाजाची, देशाची गरज झालेली आहे कारण तिचे अत्याधुनिक स्वरुप तसे तयार झालेले आहे.

निष्कर्ष :— लिपी, भाषा हयांचा संवाद करण्यात उपयोग होत असला तरी दृक—संवाद होण्यास सर्व ललीत कला, नृत्य, नाटय संगीत, चित्र शिल्प वा वास्तु अशा कलांचा उपयोग होतो त्यासाठी तयार झालेली दृक भाषा ही मोठी भूमीका गाजवते त्याचे तंत्र, शास्त्र, घटक आणि व मुलभू तत्वांद्वाराच विषयाची, विचारांची आणि भावनांची आदान प्रदान योग्य रितीने श्रोतावर्गा पर्यंत होत त्याचे उदाहरण म्हणजे आधुनिक काळातील जाहीरातींत जरी भाषा आणि लिपीचा वापर होते असला तरी सर्व ललीत कलांच्या उपयोग होतो आणि त्यातील कला अविष्कार फक्त संदेश देतो असे नाहीतर ग्राहक वर्गास श्रोता वर्गाला प्रेरीत करतो प्रेरणा देतो म्हणजेच motivate करतो आज आधुनीक युगात दृक—कला दृक—भाषा आपले कार्य संदेश देण्याचे, प्रेरीत करण्याचे, प्रेरणा देण्याचे कार्य करीत आहे आणि करीत राहील.

संदर्भ सुची —

१. मराठी विश्वकोश खंड —८

२. दृकक् — विचार प्रसारणाचे विश्व — डॉ. ग. म. रेगे

३. दृक कला मुलतत्त्वे आणि आस्वाद —डॉ. जयप्रकाश जगताप

४. कला के मूलतत्त्व और सिद्धान्त पूर्णिमा पांडे

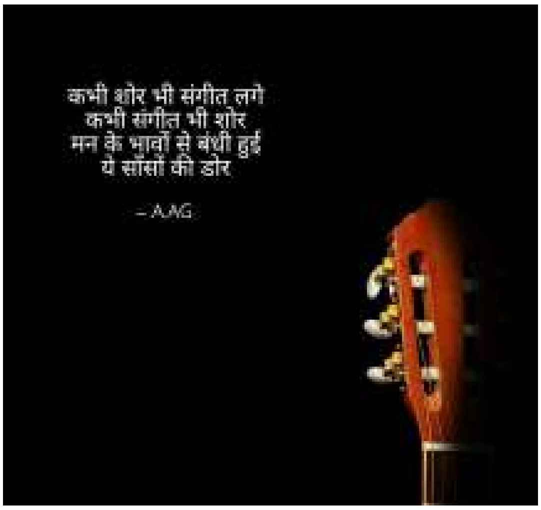

संगीत एक प्रयोगात्मक कला

डॉ. वैखरीमंगेश वझलवार
असोसिएट प्रोफेसर,
संगीत विभाग प्रमुख
एल.ए.डी.कॉलेज, शंकरनगर, नागपुर.
मो ९८९०३३०७०३, ७४९९६३२२२३

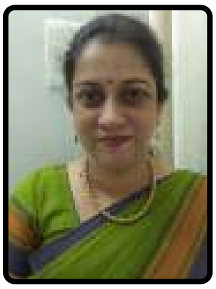

प्रस्तावना : 'संगीत' ज्यामध्ये गीत, वाद्य आणिनृत्य या तीनही कलांचा सुसंगम साधला गेला आहे. प्राचीन काळापासूनच या तीनही कलांनी मानवी जीवनात आपले हक्काचे स्थान निर्माण केले आहे. संगीतही ज्याप्रमाणे एक रंचनात्मक कला आहे, त्याचप्रमाणे एक प्रयोगात्मक कला सुद्धा आहे. गेल्या काही वर्षात संगीताच्या प्रयोगात्मकतेकडे सर्वांचे विशेष लक्ष वेधले जात आहे. अर्थातच ती आजच्या काळाची गरजही आहे. वैश्विकीकरणाच्या ह्या युगात संगीतकलेला 'प्रयागात्मकता' नावाचा पोषाखही परिधानकरावा लागला. हा नवा पोशाख, हे नवे रुप संगीत कलेनी यशस्वी पण पेलले. संगीताच्या ह्या प्रयोगात्मकतेला विविधांगांनी अभ्यासण्याच्या दृष्टीने ह्या लेखाचे प्रयोजन.

श्री अशोककुमार 'संगीत और संवाद' ह्या पुस्तकात उपरोक्त विषयाला अनुसरुन लिहीतात, ''मानव, संवेदनात्मक अनुभूतियों को अभिव्यक्तकर, प्रकाशित कर, उजागर करके नित नए कलात्मक पेहेलुओं को जन्त देता है।'' हेच कारण आहे की ज्यामुळे संगीतातील प्रयोगात्मकतेला सर्वच क्षेत्रामध्ये मानाचे स्थान मिळाले आहे.

संगीताचेप्रयोगात्मक रुप हे मानसिक व्याधींना आणि विचारांना पोषक आहे. ह्या ठिकाणी पोषकहा शब्द समारात्मक परिणामांचा द्योतक आहे. प्रयोगात्मकतेच्या चौकटीतून जात असताना संगीत हे केवळ शास्त्रीय संगीताच्या कक्षेत न राहतात्यानी किर्तनी संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगमसंगीत, लोकसंगीत कर्नाटक संगीत, रविंद्र संगीत आणि पाश्चात्य संगीत असा विविधा रंगीपोषाख परिधान केला आहे. ह्या प्रत्येक प्रकाराच्या संगीताचा स्वत:ची अशी स्वतंत्र ओळख आहे आणि रंगीत क्षेत्रात अव्वल स्थान आहे. लोकमान्य टिळकांचे प्रसिद्ध उद्‍गार म्हणजे, ''मी पत्रकार झालो नसतो तर नक्कीच किर्तनकार झालो असतो'' 'संगतीविचार' ह्या पुस्तकात अशो करानडे यांचे हे विचार संगीताच्या प्रयोगात्मक पैलूला उजाळा देणारे आहे. ते लिहीतात, ''किर्तन हे जनसंपर्काचे प्रभावी माध्यम आहे. कारण एकत्र आणि सामूहिक अशा दोन्ही तत्वांना एकाचवेळी त्याचे आवाहन राहते. तेबहुविध आहे. भाषण, गायन, मूकभिनय, नृत्य आणि कथन यांचा किर्तनात अंतर्भाव असतो. या कारणास्तव एखाद्या प्रभावी नाटकाप्रमाणे भारतीय समाजाच्या अनेक थरांवर त्याची पकड बसते.'' अलकनंदा पलनीटकर म्हणतात, ''संगीत शिक्षाका उद्देशजन साधारण में संगीत के प्रतिप्रेम व आत्मचेतना की जागृती उत्पन्न करना है।'' उपरोक्त मतांमध्ये संगीत कलेच्या प्रयोगात्मकतेचे धागे सापडतात. डॉ. प्रदीप कुमार दिक्षित म्हणतात, ''संगीत सुनने का अनुभ व कभी सुखद होतो कभी दु:खद तो कभी असमंजस। लेकिन इतना अवश्य है की वह चित्तकोडावाडोल अवश्य करेगा। पर निश्चित प्रभाव अवश्य छोडेगा।'' ह्या सर्वविधानांवरुन संगीताच्या प्रयोगात्मकतेची साक्ष पटते. संगीतही एक प्रयोगात्मक कला आहे हे ज्याप्रमाणे विविध लेखांमध्ये उद्धृत केले गेले आहे त्याचप्रमाणे या क्षेत्रातील विविध व्यक्तींच्या अनुभवाने सिद्ध झाले आहे. संगीतही प्रयोगात्मक कला आहे हे सर्व प्रथम वैद्यकीय क्षेत्रानी सर्व सामान्या समोर आणलं. या निमित्ताने काही प्रत्यक्ष मुलाखतींचा येथे उल्लेख करावा लागेल.

वैद्यकीय क्षेत्रातल डॉक्टर :

या गटात वैद्यकीय क्षेत्रातील ॲलोपॅथी, होमिओपॅथी

आणि आयुर्वेद हे सर्वच डॉक्टर समाविष्ट आहेत. ते म्हणतात संगीत ही कला आम्हा सर्वांना एक कला रसिक म्हणून खूपच आवडते. संगीताचा मनमुराद आस्वाद आम्ही विविध कार्यक्रमांमध्ये घेतोच पण जेव्हा हे संगीत एक प्रयोगात्मक कला पद्धती म्हणून आमच्या क्षेत्रात आले ती आमच्या वैद्यकीय उपचाराला पूरकच ठरली. एखाद्या शारीरिक व्याधीला किंवा आजाराला पोषक आणि पूरक औषध लिहून दिल्या नंतर पेशन्टनी आवडणारे संगीत देखील फावल्या वेळात ऐकावे असाफलदायी सल्ला देखील आम्ही पेशन्टला देत असतो. तसेच आम्ही आमच्या दवाखान्यात सुमधूर संगीत सुरु ठेवता. जेणेकरुन येणाऱ्या प्रत्येक पेशन्टला दवाखान्यात आल्यावर मानसिक स्थैर्य मिळेल. ज्यामुळे त्यांना देण्यात येणाऱ्या औषधोपचाराचा यथोचित परिणाम देखील साधला जातो. ह्याच गटात जे सर्जन, न्युरोलॉजिस्ट, कॅन्सरस्पेशालीस्ट आणि इतरही सवदह treatment देणारे डॉक्टर म्हणाले की आम्ही आमच्या पेशन्टवर दवाखान्यात उपचार करत असतांना आमच्या OT मध्येही शांत आणि प्रेरणदायक संगीताचा प्रयोग करतो. त्यामुळे केवळ पेशन्टच नव्हे तर आम्हाला देखील ताणतणाव जाणवत नाही. हे तणावरहित आयुष्यच संगीताच्या प्रयोगात्मकतेची पावती आहे.

महाविद्यालयीन विद्यार्थी :

यामध्ये विशेषकरु नइंजिनियर, मेडिकल, MBA, CA, IAS, IESP या विद्यार्थ्यांचा समावेश आहे. ह्या सर्व विद्यार्थ्यांचे जीवन अतिशय स्पर्धात्मक आणि अभ्यासाचा डोंगर पेलणारे असते. ताच जगाच्या ह्या जीवघेण्या स्पर्धेत त्यांना स्वत:ला सिद्धही करायचे असते. अभ्यासातील किचकटपणा, रुक्षपणा आणि क्वचित बोथटपणा यावर मात करुन हाच अभ्यास सुखकर व प्रेरणादायी ठरावा, याकरता हे विद्यार्थी संगीताचा आधार घेतात. ते म्हणतात, ''संगीतामुळे मिळणारी ही प्रेरणा आमचा ताणतणाव कमी करते. आमचा अभ्यास कमी वेळात तर होतोच पण गुणवत्तापूर्ण होतो.'' अभ्यास करत असतांना आम्ही आमच्या आवडीचे संगीत ऐकतो तसेच आम्हालाही संगीत शिकण्याची संधी मिळून आम्ही संगीताचे उपासक व्हावे अशी इच्छाआहे. संगीताचे हे प्रयोगात्मक रुप आम्हाला आपलेसेच वाटते.

नौकरी आणि स्वतंत्र व्यवसाय करणारे स्त्री आणि **पुरुष :** ह्या क्षेत्रातील सर्वांचाच अभिप्राय असा की, ''आम्ही संगीत कला प्रेमी आहोत. आमच्या दिवसभराच्या कामाच्या व्यस्ततेतून वेळ काढून आम्ही संगीताचे कार्यक्रम ऐकायला जातो. फावल्या वेळात घरीपण संगीत श्रवण करतो, टीव्हीवर संगीताचे कार्यक्रम बघतो. पण हल्लीच्या बदलत्या कामाच्य ा व्यापानूसार वेळे अभावी आम्हाला कार्यक्रमाला जाणे जमत नाही आणि कामाच्या व्यापाने ऑफिसच्या कामाच्या वेळाही वाढल्याआहेत. त्यामुळे आम्ही कामाच्या वेळातच आम्हाला आवडणारे संगीत ऐकतो आणि त्याचा प्रयोगात्मक परिणाम म्हणजे आमची ऑफिसचे काम करण्याची क्षमता वाढली.तसच आजच्या युगातील technical काम, computer वरील काम करण्यात आम्हाला त्रास जाणवत नाही. त्यामुळे संगीताच्या ह्या प्रयोगात्मक भूमिकेला आमचा सलाम!

संगीताचा हा प्रयोगात्मक पैलू डॉ. महारानी शर्मा ह्यांनी त्यांच्या संगीत चिकित्सा(Music therapy) ह्या पुस्तकात अतिश सविस्तर आणि अभ्यासपूर्ण पद्धतीने मांडला आहे. त्या म्हणतात, ''भारतीय संगीत की प्रेरणादायक और प्राणदायिनी शक्तिसे प्रेरित होकर संगीत कोचिकित्सासे जोडा गया।'' त्यापुढे लिहीतात ''१९६२ में बर्लिन के डॉ. कुर्ते ने दोविक्षिप्तलडकीयों कोड्रम आदि की ध्वनीयों ये स्वस्थकिया। संगीत के प्रभावसे उन लडकीयों की मानसिक बिमारी दूर होती चली गई, और विक्षिप्त लोगों की दुनिया से निकलकर स्वस्थ लोगों के सम्पर्क मे आ गई।'' ह्या आणि अशा विविध उदाहरणांवरुन संगीताचे प्रायोगिकीकीण सिद्ध होते.

निष्कर्ष :

प्राचीन काळापासून संगीतही एक जनरंजनाची आणि मनरंजाची सरस कला आहे. आजही तिचे ते स्वरुप कायम आहे. पण बदलत्या काळानुसार आणि गरजेनुसार

तिने प्रयोगात्मकतेचा वेष परिधान करुन येनकेन प्रकारेण सम्पूर्ण जनमानसात मानाचे अढळ स्थान पटकावले आहे. संगीताचीही प्रयोगात्मकता लहानांपासून ते वृद्धांपर्यंत तसेच पशुपक्षी–वृक्षवल्ली या सर्वांसाठीच एक दुआ ठरली आहे.

संदर्भ :

१. संगीत और संवाद–अशोककुमार.

२. संगीतविचार–अशोकरानडे

३. शास्त्रीय संगीतशिक्षा 'समस्याए एवंसमाधान' –अलकनंदापवनीटकर

४. भारतीय संगीत के नए आयामरसमय संगीत–पं. विजयशंकरमिश्र

५. रसमय संगीत : संगीतमय रस–प्रदीपकुमार दिक्षित

६. संगीतचिकित्सा (Music Therapy) –डॉ. महारानी शर्मा

७. प्रत्यक्ष मुलाखती.

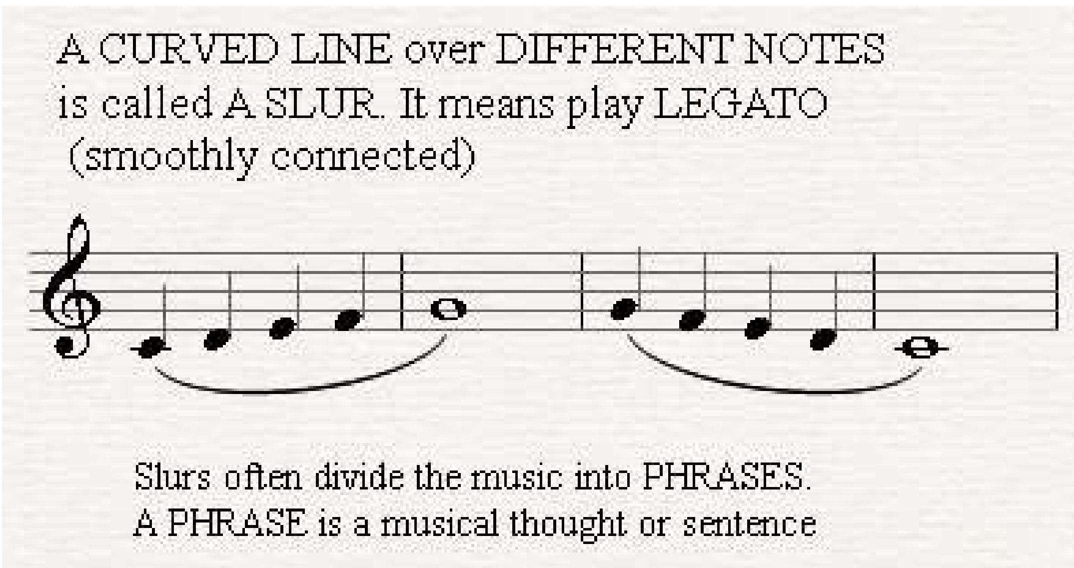

सूफी मत एवं संगीत : उद्भव और विकास

डॉ. सुनील कुमार तिवारी
विभागाध्यक्ष
स्नातकोत्तर संगीत विभाग
सुन्दरवती महिला महाविद्यालय
भागलपुर, तिलका माँझी भागलपुर
विश्वविद्यालय, भागलपुर.

अरबी मूल के शब्द 'इस्लाम' का अर्थ है, 'आत्म–समर्पण' और इसके प्रवर्तक थे हज़रत मुहम्मद। उनका जन्म 570 ई0 में अरब की कुरैश क़बीले में हुआ। इस्लाम की उत्पत्ति इसी अरब भूमि में हुई। 622 ई0 में मुहम्मद आत्मरक्षार्थ मक्का से मदीना गए। उन्होंने सेना तैयार कर पूरे अरब पर अपना अधिकार जमा लिया। उन्होंने अरबवासियों को एकता के सूत्र में बांधा और उन्हें धार्मिक जोश व उन्माद से भर दिया। मुहम्मद ने दार्शनिकता की पेचीद्गियों से बचते हुए एक सीधे सादे धर्म का जन्म दिया। उनके अनुसार अल्लाह एक है और मुहम्मद उसका पैगंबर है। इस धर्म को मानने वाले निम्नलिखित पाँच बातों में मूल रूप से विश्वास करते हैं–

(क) कलमा पढ़ना (कि अल्लाह एक है)
(ख) नमाज़ पढ़ना (पाँच वक़्त की)
(ग) रमज़ान के महीने में रोज़ा रखना
(घ) ज़कात (अपनी आय का 2): दान देना)
(ङ) हज करना।

मुहम्मद मूर्ति पूजा के सख़्त विरोधी थे। उन्होंने अरब में प्रचलित आचार–विचारों का खंडन किया और ख़ुदा के हुक्म को मानने को परम कर्तव्य बताया इनका मक्का छोड़कर मदीना जाना हिज़रत कहलाता है। यही से हिज़री सम्वत प्रारंभ होता है। यथरिव में आकर वे रूके, इसलिए उस नगर का नाम मदीनतुन्नबी। (नबी का नगर) पड़ा, उनका धर्म अत्यंत सरल और सुलभ था। इस्लाम की लोक–प्रियता बराबरी वाले सिद्धान्त के कारण काफी बढ़ गई। प्रारंभ में इस्लाम एक क्रांतिकारी धर्म था। एक ओर इसने मनुष्य को अंधविश्वास से बचाया और दूसरी तरफ दार्शनिक उलझनों को दूर रखा।

भारत में यह धर्म नौवी शताब्दी के समाप्त होने के पूर्व ही मालाबार के राजा चरेमन पेरूमल जो मुसलमान हो गया था, की मेहबानी से आया और उसे फैलाने का कार्य प्रारम्भ हो गया।

इस्लाम में दो मत है शिया और सुन्नी। भारत में मुसलमानों की अधिकतम संख्या सुन्नियों की है। अपने आगमन के समय से लेकर वर्तमान काल तक इस्लाम लगभग हर क्षेत्र में भारतीय संस्कृति को प्रभावित करता रहा है। कला, संगीत, साहित्य, स्थापत्य कला के क्षेत्र में इस्लामी संस्कृति का व्यापक प्रभाव पड़ा। सूफ़ी आन्दोलन मध्य भारत के भक्ति अन्दोलन और इस्लामी विचारों के संसर्ग का ही प्रभाव था। सूफ़ी मत इस्लाम में रहस्यवादी विचारों एवं उदार प्रवृतियों का प्रतिनिधित्व करता है। सूफ़ी शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा के सफ़ा से हुई है जिसका अर्थ है पवित्रता अर्थात् जो लोग आध्यात्मिक रूप से और आचार–विचार में पवित्र थे, वे सूफ़ी थे। सामान्य रूप से यह माना जाता है कि सूफ़ी मत का मूल आधार इस्लाम में निहित है और क़ुरान के उपदेशों में देखा जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि क़ुरान के उपदेशों की रूढ़िवादी व्याख्या 'शरीयत' है और उदार व्याख्या 'तरीक़त' है, जो सूफ़ी मत का आधार है। संसार से विरक्ति, एकांतमय जीवन और ईश्वर के प्रति अनुराग सूफ़ियों के आचरण का मुख्य आधार है और यह प्रवत्ति उमैया वंश के शासक के अंतिम

दिनों में उभरी, जबकि निरंकुशता, गृहयुद्ध, अरब और ग़ैर–अरब में भेदभाव एवं शासक वर्ग की विलासिता ने लोगो के मन में एक गंभीर संकट उत्पन्न कर दिया। धीरे–धीरे सूफ़ियों पर ईसाई, बौद्ध और हिन्दू धर्म के वेदांत दर्शन का भी प्रभाव पड़ा, जिसे सूफ़ीवाद का रूप विकसित हुआ। प्रो0 ताराचंद के शब्दों में सूफ़ी मत एक ऐसे महासागर के समान है, जिसमें अनेक नदियाँ आकर विलीन हुई है और प्रत्येक ने अपना प्रभाव छोड़ा है। ईसाईयों से ख़ानकाह का संगठन बौद्ध धर्म से एकांतमय जीवन एवं दरिद्रता तथा हिन्दू धर्म से आत्मा और परमात्मा के बीच संबंधों पर व्यक्त विचार; सूफ़ी मत पर अन्य धर्मो के प्रभाव स्पष्ट उदाहरण के रूप में देखे जा सकते है।

भारत में सूफ़ी मत का प्रवेश 11वी शताब्दी में हुआ, किन्तु 13वीं से 19वीं सदी के बीच ही इसका व्यापक प्रभाव व प्रसार हुआ। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि शंकाराचार्य का अद्वैतवाद और रामानन्द की भक्ति भावना पर सूफ़ियों का गहरा प्रभाव पड़ा है। सूफ़ियों और संतों में काफी समानताएँ है, जैसे गुरू का महत्व, नाम स्मरण, प्रार्थना, ईश्वर के प्रति प्रेम, व्याकुलता एवं विरह की स्थिति, संसार की क्षणभंगुरता, जीवन की सरलता, सच्ची साधना, मानवता से प्रेम इत्यादि सूफ़ियों और निर्गुण संतों की आस्था धर्म तथा समाज के आडम्बर भक्त कर्मकांडों में न होकर भावना एवं साधनात्मक रहस्यवाद में रही है।

भक्ति आन्दोलन के संत नानक और कबीर सूफ़ी विचारधारा से स्पष्टतः प्रभावित थे। 'आदिग्रंथ' में बाबा फ़रीद के शब्द आज भी सुरक्षित हैं। सिक्ख धर्म की कई परम्पराएँ जैसे– गुरूपद का धार्मिक एवं राजनीतिक नेतृत्व से संबंध मसनद की व्यवस्था इत्यादि इस्लाम से स्पष्ट प्रभावित हैं। कबीर की शब्दावली और उनके द्वारा निर्गुण निराकार ईश्वर की आराधना सूफ़ीवाद की ही देन है।

सूफ़ियों ने संगीत सभाओं 'समा' के आयोजन पर विशेष बल दिया था। इनमें भक्ति भाव से प्रेरित काव्य वाद्ययंत्रों के साथ गाये जाते थे। चूँकि सूफ़ी पहले से ही ईरानी संगीत जानते थे, इसलिए 'सभावों में इरानी राग–रागिनियों का विस्तार हुआ। मध्यकाल में संगीत क्षेत्र में अमीर खुसरों का योगदान अविस्मरणीय है। इन्होंने नये राग बनाए, नये वाद्ययंत्र विकसित किए आगे चलकर मुहम्मद ग़ौस ग्वालियरी ने भी संगीत की समृद्धि में विशेष भूमिका निभाई। कहा जाता है कि प्रसिद्ध संगीतकार तानसेन ने ईरानी संगीत की शिक्षा इन्हीं से ली थी।

भाषा और सहित्य के क्षेत्र में भी सूफ़ियों का योगदान अद्वितीय है। प्रो0 निज़ामी के अनुसार सूफ़ियों के ख़ानक़ाहों में ही ऊर्दू भाषा का जन्म हुआ। ऊर्दू भाषा के आरंभिक ग्रंथ सूफ़ियों ने ही लिखे हैं।

मुस्लिम समाज के प्रति भी इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वस्तुतः भारत में इस्लाम का प्रचार इन्होंने ही कियाा। इन्होंने सिद्ध किया कि इस्लाम धर्म केवल हिंसा और कट्टरता पर ही आधारित नहीं है। निज़ामी के अनुसार सम्पूर्ण सूफ़ी आंदोलन ने बहमनी राज्य को नैतिक बल प्रदान करने का ही कार्य नहीं किया बल्कि उसके उत्तरधिकारियों ने जनता के आध्यात्मिक एवं नैतिक विकास को पुष्ट करने हेतु सामाजिक विचारों के निर्माण का नया वातावरण भी निर्मित किया। मध्यकाल में नगरीय जीवन के कारण जो बुराइया आ गयी थी जैसे– मुनाफ़ाखोरी, दास प्रथा, मद्यपान, वेश्यावृति इनके विरूद्ध नई चेतना जगाने में सूफ़ियों का ही हाथ था।

भारत में सूफ़ीमत तथा उसका प्रभाव इस्लाम में सूफ़ीमत का विकास किसी धर्म में होने वाले रहस्यवादी आंदोलन (Mystic Movement) की सफलता तथा लोकप्रियता का महत्वपूर्ण और

दिलचस्प इतिहास है। जहाँ तक रहस्यवाद का सवाल है, आरबेरी (Arberry) के शब्दों में ''यह वह भावना है जो हमेंशा से प्रकृति के रहस्यों को जानने के लिए मानव को प्रेरित करती रही है।''

इस्लाम में सूफ़ीमत का उदय तथा संगठन

सूफ़ी सहायक को ब्रह्मज्ञानी तथा आध्यात्मवादी माना जाता रहा है। वैसे भी सूफ़ी वही कहलाता है जो तसव्वुफ़ का अनुयायी और धर्मो से प्रेम करने वाला होता है। प्रारम्भ में तो सूफ़ी लोग (आठवी और नवीं शताब्दी में) अरब में दिखलाई पड़े और काफी समय तक उनकी पहचान उनके ऊनी लिबासों से की जाती थी। 'सफ़' का अर्थ है ऊन या बकरी या भेड़ के बाल का ऊनी कपड़ा। अतः जो स़फ के बने वस्त्र पहनता था वही सूफ़ी कहलाया। कुछ विद्वान 'सफ़ा' से सूफ़ी शब्द की उत्पत्ति मानते हैं। सफ़ा का अर्थ है– पवित्रता या विशुद्धता अर्थात् जो लोग आचार–विचार से पवित्र थे वे सूफ़ी कहलाए। विद्वानों के एक वर्ग का मत यह भी है कि मदीना में मुहम्मद साहब द्वारा बनाई मस्जिद के बाहर सफ़ा अर्थात् मक्के की एक पहाड़ी पर जिन व्यक्तियों ने शरण ली तथा खुदा की अराधना में लीन रहे वे सूफ़ी कहलाए। जो भी हो यह सच है कि 'साधक' के लिए सूफ़ी शब्द का प्रयोग ईसा की नवीं शताब्दी से प्रचलित होने का प्रमाण मिलता है। ये सूफ़िया सूफ़ीमनिश होते थे अर्थात् किसी भी धर्म या व्यक्ति से बैर न रखने वाले होते थे।

मुस्लिम तथा और मुस्लिम विद्वानों के मतों का अध्ययन करने पर इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि सूफ़ी मत का बीजारोपण मुस्लिम मानस में हुआ और जो बाह्य प्रभावों के कारण विधि–विधानों एवं बाह्य आडंबरों के विरूद्ध एक प्रचंड आवाज़ थी। सूफ़ीमत के विकास में ईरान का बड़ा हाथ था। ''वास्तव में इस्लाम का जो पौधा ईरान में लगा था वही सूफ़ी मत के रूप में विकसित हुआ। रहस्यवाद और वैराग्य शायद रूढ़िवादी परमार्थ विद्या (Theology) के दो विकल्प थे। जब कि सूफ़ीवाद मूलतः दार्शनिक व्यवस्था पर टिका था। इस दार्शनिक व्यवस्था के कारण ही सूफ़ीवाद ने इस्लाम की कट्टरता को तिलांजलि देकर रहस्यवाद की आंतरिक गहराई से समझौता कर लिया। जिस प्रकार धार्मिक विचारकों ने क़ुरान तथा इजमा के आधार पर अपने सिद्धान्तों की व्यवस्था दी है उसी प्रकार सूफ़ियों सूफ़ियों ने भी अपना रास्ता क़ुरान तथा सुन्नत के भीतर से ही निकाला। परंतु उनेक मार्ग व दिशा (तरीक़त) हमेशा शरीयत से मेल नहीं खाते।

मंसूर हल्लाज (358–922 ई0) प्रथम साध ाक थे। जिसने अपने को 'अनलह़क' । nalh घोषित किया और प्राण न्योछावर कर दिए। परवर्ती काल में मंसूर सूफ़ी विचारधारा का प्रतीक बन गया। इब्नुलअरबी प्रथम व्यक्ति था जिसने सूफ़ी जगत में महत्वपूर्ण वहदत–उल–वूजूद (Wahadat-ul-Wujud) का. सिद्धांत प्रतिपादित किया। इस सिद्धांत का सारांश यह रहा है कि भगवान सर्वव्यापी है और सबमें उसी की झलक है। उससे कुछ भी अलग नहीं है। सभी मनुष्य समान है। इस प्रकार इब्नुअरबी ने अपनी वाक्–शक्ति और लेखनी द्वारा इस मत के विकास में जो महत्वपूर्ण योग दिया वह सूफ़ी मत के इतिहास में सदैव चिरस्मरणीय रहेगा। सैयद मुहम्मद हाज़िफ के अनुसार चिश्ती भारत का सर्वप्रथम प्राचीन सूफ़ी सिलसिला है। ख़्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती सन् 1192 ई0 में शहाबुद्दीन गोरी की सेना के साथ भारत में आये थे और बाद में उन्होंने ही चिश्तिया परम्परा की नींव रखी। उन्होंने यहाँ आकर अनेक स्थानों का भ्रमण करने के बाद अजमेर को अपना स्थायी निवास स्थान बनाया। उनकी समाधि अजमेर में 'ख़्वाजा साहव' के नाम से प्रसिद्ध दरगाह है।

चिश्ती–सिलसिला संगीत को ईश्वर प्रेम का महत्वपूर्ण साधन समझता था जब कि सनातनपंथी इस्लाम में इसकी पाबंदी थी।

सूफ़ी और मौलवी :

'सूफ़ी' शब्द की उत्पत्ति 'सूफ़ी' (ऊनी कम्बल) से हो या 'सफा' स्वच्छता से। वह धार्मिक और नैतिक जगत में एक विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। वह देश और सम्प्रदाय की ओर तटस्थ है तथा प्रत्येक जाति और धर्म में पाया जाता है। वह एक प्रकार का विद्रोही है, जो अन्तर को भावनाहीन बना देनेवाली रूढ़ियों अथवा दिखावों को उचित नहीं मानता और उसके विरूद्ध विद्रोह का पताका फहराता है।

मौलवी और सूफ़ी में अन्तर यह है कि वह वहिरंग को देखता है और यह अन्तरंग को। वह शब्द देखता है और यह अर्थ। वह अनुकरण और कर्मकाण्ड का दास है और यह ऐसी वस्तुओं से दुःखी। उसकी दृष्टि दोषों पर पड़ती है और यह बुरे से बुरे में भी भलाई का पक्ष दूँढ़ निकालता है। वह धिक्कार और तिरस्कार से काम लेता है और यह दया एवं स्नेह से। वह हिंसा और कठोरता का अवलम्बन करता है और यह करूणा एवं सौहार्द का। वह बहुत कम क्षमा करता है और इसका स्वभाव ही दोषों की उपेक्षा करना है, वह आत्म–गर्व और आत्म–प्रदर्शन से बड़ा बनता है और यह विनम्रता और विनय से मन में समा जाता है। वह दूसरों के दोषों का उद्घाटन करता है और यह आत्म–निरीक्षण करता है।

मौलवी सबको एक लाठी से हाँकता है, परन्तु सूफ़ी प्रत्येक व्यक्ति की रूचि देखता है और उसी के अनुसार उसका संस्कार करता है। इस प्रयोजन के लिए कभी–कभी 'शरीयत' धार्मिक विधि विधान की अथवा बाह्य आचारों की भी उपेक्षा कर देता है। उसकी दृष्टि परिणाम की ओर होती है, वह मौलवी की भाँति शब्दों का दास नहीं होता है, अर्थ को देखता है। वास्तविक सूफ़ी बहुत बड़ा मनोवैज्ञानिक होता है। यद्यपि वह एक प्रकार प्रकार से संसार में लिप्त नहीं होता और मौलवी उसके अपेक्षा अधिक दुनियादार होता है। परन्तु वह लोक रूचि को मौलवी की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छे रूप से पहचानता है।

यह दिलों को खोलता है, उनकी गहराइयों तक पहुँचता है और जहाँ पूर्वाग्रह छिपे होते है वहाँ तक पहुँच जाता है मौलवी की दृष्टि वहाँ तक नहीं पहुँचती। सूफ़ी अन्दर तक की चोरियों को सरलतापूर्वक इस प्रकार पकड़ लेता है कि 'मुरीद' की पता भी नहीं चलता। उसका प्रधान लक्ष्य दिलों को हाथ में लाना है और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किसी वाह्य धार्मिक अथवा अधार्मिक बाधा की चिन्ता नहीं करता, सबको तोड़कर रख देता है।

प्रमुख सूफ़ी मत एवं संत

चिश्ती सिलसिला

संस्थापक : ख़्वाजामुइनुद्दीन चिश्ती

कार्यक्षेत्र : अजमेर, नरनौल, सरवाल, अजोधन, हांसी, नागौर, बदायूं एवं उत्तर प्रदेश के अन्य शहर

प्रमुख संत : कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी, ख़्वाजाफरीद–उद–दीन गज–ए–शकर (बाब फरीद), नसीरूद्दीन चिराग–ए–दिल्ली, निजामुद्दीन औलिया, बुरहानुद्दीन गरीब, सिराजुद्दीन अकही सिराज, नूर कुतुब आलम, युसूफ–अल–हुसैनी, (गेसूदराज), शेख सली चिश्ती

विशेष विवरण : निजामिया सिलसिला निजामुद्दीन औलिया द्वारा जमालिया सिलसिला जमालुद्दीन हनोबी द्वारा एवं सबारिया सिलसिला अलाउद्दीन सबीर द्वारा स्थापित किया गया।

सुहरावर्दी सिलसिला

संस्थापक : शिहाबुद्दीन सुहारावर्दी, शेख बहाउद्दीन जकारिया (भारत में)

कार्यक्षेत्र : सिंध और मुल्तान

प्रमुख संत : शेख बहाउद्दीन जकारिया, हमीदुद्दीन

जकारिया, जलालुद्दीन बुखारी
विशेष विवरण : बहाउद्दीन जकारिया को इल्तुतमिश ने शेख–उल–इंस्लाम की उपाधि प्रदान की थी।
फिरदौसी सिलसिला
संस्थापक : बदरूद्दीन समरकंदी
कार्यक्षेत्र : बिहार और बंगाल
प्रमुख संत : बदरूद्दीन समरकंदी, अहमद मुनैरी
विशेष विवरण : इस सिलसिले की स्थापना पहले दिल्ली में हुई। बाद में बिहार में स्थानांतरित हो गयी।
सत्तारी सिलसिला
संस्थापक : शेख अब्दुल्ला सत्तार
कार्यक्षेत्र : बंगाल, जौनपुर, दक्कन
प्रमुख संत : शेख अब्दुल्ला सत्तार
विशेष विवरण : इस सिलसिले की भारत में स्थापना करने वाले शेख अब्दुल्ला सत्तार कट्टरपंथी थे। इन्होंने राज्य संरक्षण स्वीकार किया।
कादिरी सिलसिला
संस्थापक : अब्दुल कादिर जिलानी (बगदाद में), शाह निजाम तुल्ला (भारत में)
कार्यक्षेत्र : पंजाब, सिंध और लाहौर
प्रमुख संत : अब्दुल कादिर जिलानी, शेख मूसा, शेख दाऊद, अब्दुल रज्जाक, शेख अमन
विशेष विवरण : 14वीं शताब्दी में यह संप्रदाय भारत आया। अब्दुल कादिर का पुत्र शेख मूसा अकबर का मनसबदार बन गया। इन्होंने राज्य की सहायता स्वीकार की।
कलंदर सिलसिला
संस्थापक : अबुल अली कलंदर
कार्यक्षेत्र : पानीपत
प्रमुख संत : अबुल कलंदर
विशेष विवरण : ये घुमक्कड़ प्रवृत्ति के थे। ये सूफ़ी के खानकाह, रहन–सहन का विरोध तथा निंदा करते थे। ये कमोबेश नंगे रहते थे।
नक्शबंदी सिलसिला
संस्थापक : ख़्वाजाबकी बिल्लाह
कार्यक्षेत्र : दिल्ली, कश्मीर
प्रमुख संत : ख़्वाजाबकी बिल्लाह, शेख अहमद सरहिंदी, खाबंद महमूद, मिर्जा मजहर, ख़्वाजामीरदर्द
विशेष विवरण : शेख अहमद सरहिन्दी जो अकबर और जहांगीर के समकालीन थे, बहादल–उल–सुहदुत का सिद्धांत प्रतिपादित किया।
क्ब्राविययिा सिलसिला
संस्थापक : मीर सैयद अली हमदानी
कार्यक्षेत्र : कश्मीर
सूफ़ी और संगीत

प्रत्येक धर्म की दृष्टि से व्यसन अनुचित है। व्यसन व्यक्ति को उचित मार्ग से हटाता है। कर्त्तव्य से विमुख करने वाला प्रत्येक कार्य अधर्म है। जिस कार्य से मनुष्य का सर्वांगीण उननति हो, वह धर्म है। जो कार्य मनुष्य के उचित विकास में बाधक हो, वह अधर्म है। वासनाओं को अनुचित रूप में उभारनेवाला गीत–नृत्य किसी भी धर्म में प्रशंसनीय नहीं कहा गया।

वीणापाणी सरस्वती को माँ कहा जाता है, वे ज्ञान और कला की अधिष्ठात्री देवी हैं। अप्सराएँ स्वयं को माँ कहलवाना ही नहीं चाहती। बेचारे अर्जुन ने उर्वशी को माँ कहा, तो उसने इसे अपने रूप और यौवन का अपमान समझकर अर्जुन को नपुंसक हो जाने का शाप दे दिया।

बात अत्यंत स्पष्ट है। कव्वाली सुनकर भाव–मन हो जानेवाले आनन्द में झूमकर नाचनेवाले, चाहे हमीदुद्दीन नागौरी हों, या चैतन्य महाप्रभु, इन्हें पापी कौन कह सकता है। इस गान–वादन से मेनका के उस गीत नृत्य का क्या सम्बन्ध है, जो तपस्वी विश्वामित्र को योगभ्रष्ट करने के लिए किया गया था।

"हज़रत मुहम्मद का समसामयिक हारिस का पुत्र नज़र एक गीत–नृत्य–मर्मज्ञ दासी मोल ले आया। जब वह सुनता कि कोई व्यक्ति मुसलमान होना चाहता है, तो उससे कहता कि

मुहम्मद नमाज़ पढ़ने, रोजा़ (उपवास) रखने और जिहाद (धर्म की लिए युद्ध) करने के लिए कहते हैं, उनकी बात मानने की अपेक्षा अच्छा तो यह है कि इस सुन्दरी की कला का आनन्द लिया जाये। ऐसी स्थिति में संगीत को त्याज्य न कहा जाता, तो क्या किया जाता।

विवाह के पश्चात् एक नववधू अपनी ससुराल पहुँची, तो ''हज़रत मुहम्मद'' ने घर के लोगों से कहा कि क्या कोई गानेवाली औरत न थी, जो विदा के समय वर के घर गाती स्पष्ट है कि ऐसे समय मंगल–गीत गाये जाते हैं, वर–वधु के लिए ईश्वर से शुभकामना की जाती है, भला मुहम्मद साहब ऐसे मंगल–गीतों को त्याज्य क्यों कहते।

इस प्रकार संगीत की ग्राह्यता और त्याज्यता के विषय में मौलावियों और सूफ़ियों में सदा मतभेद रहा है। शब्दों से चिपके रहनेवाले मौलवी जहाँ गाना, बजाना नाचना सर्वथा वर्जित समझते आये हैं वहाँ ईश्वर के ध्यान में आत्म–विस्मृत होकर गाना, बजाना, नाचना, शेख जुनैद बगदादी (मृत्यु 911 ई0) तथा शेख अबुबक्र शिबली (मृत्यु 946 ई0) जैसे सूफ़ियों की दृष्टि में वैध ही नहीं आवश्यक भी है।

शेख ख़्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की संगीत–मर्मज्ञता के विषय में कुछ भी कहा जाना सम्भव नहीं है परन्तु उनकी सेवा में ऐसी क़व्वाल थे जो हिन्दी में सूफ़ी विचारधारा के प्रतिपादक गाने गाते थे।

भारतवर्ष में सूफ़ियों की सुहरवर्दी परम्परा के संस्थापक शेख बहाउद्दीन जकारिया मुलतानी (मृत्यु 1267 ई0) संगीत के महान आचार्य और संरक्षक थे। शेख कुतुबुउद्दीन बख़्तियार काकी (मृत्यु 1256 ई0) का तो स्वर्गवास ही क़व्वाली सुनते–सुनते हुआ था। शेख फरीद्उद्दीन गंजशकर (मृत्यु 1256 ई0) भी संगीतानुरागी थे। ख़्वाजानिज़ामुउद्दीन चिश्ती की संगीत–मर्मज्ञता के विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता वो तो क़व्वाली सुनते नाचने लगते थे, कभी–कभी तो कई–कई दिन तक भाव मग्न रहते थे। ग्यासउद्दीन तुगलक के युग में इन्होंने 'समा' के औचित्य के विषय में एक प्रसिद्ध शास्त्रार्थ करके प्रतिपक्षियों को पराजित किया था। बाबा गंजशकर के घेवते और शेख़ निजामुउद्दीन चिश्ती के मुरीद ख़्वाजा सैयद मुहम्मद इमाम और ख़्वाजा सैयद मूसा महान संगीत–मर्मज थे।

जब शेख निजामुउद्दीन चिश्ती भाव–मग्न होकर नाचने लगते, तब ख़्वाजासैयद मुहम्मद इमाम भी नाचने लगते थे। क़व्वाली की मजलिसों में यही अध्यक्ष बनाये जाते थे। इनकी सेवा में फारसी और हिन्दी और गीत गानेवाले अनेक क़व्वाल रहते थे। संगीत शास्त्र के अनुपम व्याख्याता के रूप में इनकी बड़ी प्रसिद्धी थी, ये चिकित्साशास्त्र के भी मर्मज्ञ थे। ख़्वाजा सैयद मुहम्मद इमाम के छोटे भाई ख़्वाजा सैयद मूसा भी संगीत के रहस्यों को समझनेवाले अधिकारी विद्वान थे, बड़ी दर्द–भरी ग़ज़लें कहते थे। अपने युग में प्रचलित विद्यायों के पण्डित थे, चिकित्साशास्त्र पर भी इनका अद्भुत अधिकार था।

ख़्वाजा निज़ामुद्दीन चिश्ती के ख़लीफा शेख़ नसीरूद्दीन चिराग़ देहली (मृत्यु 1356 ई0) उनके ख़लीफ़ा ख़्वाजाबन्दानवाज गेसूदराज (मृत्यु 1421 ई.) भी परम संगीतानुरागी थे। चिश्ती परम्परा से संगीत के बीच का आरोपण प्रेरोहण एवं पल्लवन इन्हीं महापुरूषों का कार्य था।

चिश्ती–परम्परा के संगीत की मर्यादाएँ

क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती (मृत्यु 1810) ने संगीत सुनने के पक्ष में कुछ हदीसें (हज़रत मुहम्मद साहब की प्रामाणिक उक्तियाँ) अपनी पुस्तक 'रिसालः' समा व मजामीर में उद्धृत की है और उनसे निष्कर्ष निकलता है, जिसके अनुसार गाने के विषय, गायक, श्रोता, समय, स्थान, उपस्थित जनसमूह और वाद्यों के विषय में

निम्नलिखि शर्तो रखी है :–

विषय : गाने का विषय ऐसा होना चाहिए जिसमें न तो कोई इस्लाम विरोधी बात हो और न किसी जीवित नर–नारी के सौन्दर्य की चर्चा हो।

गायक : गायक संगीतजीवी न हो और सच्चरित्र हो।

श्रोता : श्रोता इन्दियजयी हो और वासना के वशीभूत होने वाला न हो।

समय : नमाज़ के समय के अतिरिक्त अन्य किसी भी समय गाना सुना जा सकता है।

स्थान : गोष्ठी का आयोजन ऐसे मकान में होना चाहिए, जो एकान्त में हो।

गोष्ठी में उपस्थित जन समूह : गोष्ठी में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति सच्चरित्र और समानशील हो।

वाद्य (मजामीर): सुषिर वाद्य 'मजामीर' कहलाते है, बाँसुरी, नफ़ीरी और शहनाई जैसे वाद्य 'मजामीर' हैं। हाथ या लकड़ी के आधात से बजाये जाने वाले दफ, ढ़ोल, नक्कारः जैसे वाद्य मआजिफ़ कहलाते हैं। यदि वाद्यों से ईश्वर–प्रेम की प्रेरणा मिलती हो तो उनका प्रयोग ग्राहय है।

अन्य अवसरों पर संगीत ग्राहयता

कुछ हदीसों के अनुसार लड़की के विवाह के पश्चात् उसकी विदाई के समय, विवाह के समय, ईद के दिन, श्रेष्ठ पुरूषों के स्वागत के अवसर पर, हर्षोत्सव में, परदेश से लौटने वाले व्यक्ति के स्वागतार्थ, बालक के जन्म पर, लड़कों के अच्छरारम्भ के समय, सामूहिक भोजन के समय गाना–बजाना या उसका सुनना विहित है।

विवाहोत्सव के समय सेना के प्रयाण के अवसर पर वाद्यों का प्रयोग विहित है। कुछ लोगों की दृष्टि में अपनी पत्नी अथवा दासी से गाना सुनना अनुचित नहीं है। ''ईश्वर भक्ति को उद्दीप्त करने के लिए गाना, यहाँ तक कि भावावेश में आकर नाचना भी कुछ मुस्लिम व्यवस्थापकों के अनुसार विहित है।

विभिन्न हदीसों का निष्कर्ष यही है कि ईश्वर की ओर मन को एकाग्र करने के लिए गाना–बजाना सर्वथा उचित है।

संदर्भ सूची

1. हुकूके इस्लाम पृ. 98 हुकूक–उल् इस्लाम, ले. काजी सनाउल्लाह पानीपती, अनुवाद सलीमउद्दीन पानीपती, प्रकाशक पाक एकेडेमी, कराची, संस्करण 1965 ई. संक्षिप्त रूपान्तर।

2. हुकूके इस्लाम पृ. 107 हुकूक–उल् इस्लाम, ले. काजी सनाउल्लाह पानीपती, अनुवाद सलीमउद्दीन पानीपती, प्रकाशक पाक एकेडेमी, कराची, संस्करण 1965 ई. संक्षिप्त रूपान्तर।

3. सियरूल औलिया, ख़्वाजाहसन निजामी द्वारा उद्धृत, पृ., 440–445

4. सियरूल औलिया, ख़्वाजाहसन निजामी द्वारा उद्धृत, पृ, 446–447

5. हुकूक–उल् इस्लाम पृ, 123–126 हुकूक–उल् इस्लाम, ले. काजी सनाउल्लाह पानीपती, अनुवाद सलीमउद्दीन पानीपती, प्रकाशक पाक एकेडेमी, कराची, संस्करण 1965 ई. संक्षिप्त रूपान्तर।

6. हुकूक–उल् इस्लाम पृ. 106–123 हुकूक–उल् इस्लाम, ले. काजी सनाउल्लाह पानीपती, अनुवाद सलीमउद्दीन पानीपती, प्रकाशक पाक एकेडेमी, कराची, संस्करण 1965 ई. संक्षिप्त रूपान्तर।

7. आर्चाय वृहस्पति, मुसलमान और भारतीय संगीत, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पटना

8. भारतीय संस्कृति, स्पेक्ट्रम बुक्स प्रा.लि. ए–12 वा, प्रथम तल, जनकपुरी, नई दिल्ली 110058,

9. हरिश्चंद्र वर्मा, मध्यकालीन भारत, भाग, 750–1540 हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

10. क्रोननिकल, (सिविल सर्विसेज,) सामान्य अध्ययन विशेषांक–2 अप्रैल 2003 पृष्ठ–104

इंग्लीश विंग्लीश : एक अध्ययन

प्रा.संयुक्ता थोरात
रा.तु.म.ना.वि. परिसर,
नागपुर.

भाषा महत्वपूर्ण है । भाषासे भावनाओं का विचारो का आदान–प्रदान किया जा सकता है । भारत देश मे अनेक प्रांत हैं और हर प्रांत की अपनी अलग भाषा है। इन्सान यात्रा करता है एक शहर से दूसरे शहर, एक प्रांत से दूसरे प्रांत जाता है । तब यह जरूरी हो जाता है कि हर प्रांतकी भाषा का ज्ञान हो । परंतु यह संभव नही होता है, इसलिए सभी के बीच उत्तम संवाद होने के लिए सबको एक भाषा का ज्ञान होना जरूरी है और देश में भी वह एक भाषा प्रमुख हो। भारत मे सभी प्रांत में हिन्दी भाषा बोली जाती है, हिन्दी यह भारत की राष्ट्रीय भाषा है । दक्षिण में हिन्दी का प्रचलन नही के बराबर है । वहाँ पर अगर हम जाते है तो भाषा की वजह से दिक्कतें का सामना करना पडता है ।

भारत में कई वर्षोतक ब्रिटिश का राज रहा था। ब्रिटिश १९४७ में भारत छोडकर गए परंतु अपनी अंग्रेजी भाषा को भारत में छोड कर गए । भारत में कई जगह पर अंग्रेजी भाषा का प्रचलन है, खास कर दक्षिण भारत में। आजकल अंग्रेजी भाषा Status Symbol बनकर रह गई है । हमारी समझ ऐसी हो गई है कि अंग्रजी बोलने वाला ज्ञानी और अंग्रेजी नही जानने वाला अज्ञानी । भारत के ग्रामीण भागों में आज भी अंग्रेजी भाषा का अभाव है। किन्ही जगहो पर शहरों में भी यह स्थिति देखी जा सकती है । प्रांतीय भाषा में अपनी शिक्षा पूरी करने वाले विद्यार्थी कभी अंग्रेजी भाषा नहीं सीख पाए या बोल पाए । अंग्रेजी भाषा का आज बहुत महत्व है । यह अंर्तराष्ट्रीय भाषा है परंतु भारत देश में राष्ट्रीय भाषा की भांति प्रचलन में है ।

अंग्रजी भाषा का अज्ञान इन्सान को संकुचित बनाता है और उसका आत्मविश्वास भी कम हो जाता है। भारत देश कला गुणों से और कलाकारों से समृध्द देश है । यहाँ की कलाओ मे पश्चिमी लोग Interest लेते है । यहाँ का नृत्य, संगीत, नाट्य, योग, चित्रकला एवं शिल्पकला के बारे मे खास Interest लिया जाता है । पश्चिमी लोग संवाद के लिए अंग्रेजी भाषा का चयन करते हैं । भारत में प्रतिभावान एवं गुणी कलाकार कईबार भाषा की वजह से पीछे रह जाते हैं। यही नहीं स्त्रियों की भी अपने बच्चो के स्कूल में अंग्रेजी भाषा की जानकारी के अभाव से दिक्कतो का सामना करना पडता है । क्या भाषा इतनी महत्वपूर्ण है ? यह भाषा न बोल पाने वाला क्या हमेशा हीन भावना का शिकार रहेंगा ? इन्ही प्रश्नों की खोज इस शोध प्रपत्र का मुख्य उद्देश है । इसके लिए उदाहरण के लिए English Viglish Movie को लिया है ।

English Viglish : यह Movie India मे ५ ऑक्टोबर २०१५ को रिलीज हुई आंतरराष्ट्रीय स्तर पर १४ सप्टेंबर २०१२ को हुई थी इस फिल्म का बजेट १५ करोड था और बिजनेस १२० करोड हुआ, गौरी शिंदे ने इस फिल्म को डायरेक्ट किया पटकथा कथा और संवाद भी गौरी शिंदे के ही थे फिल्म की अवधि १३३ मि. की है। यह फिल्म हिन्दी /इंग्लींश और तामील इन तीन भाषाओ में रिलिज हुई थी इसने डिस्ट्रीब्युशन इरोज कंपनी है। लेखक भी गिरीश शिंदे है। इसके प्रोडयुसर आर. बल्की थे । जो गौरी के पति हैं। जिन्होने पा मुव्ही बनाई।

फिल्म में मुख्य किरदार श्रीदेवी ने निभाया है। फिल्म के प्रोमो मे दिखाया जाता था कि श्रीदेवी टायटल बोर्ड को पढ़ रही है । वह बोर्ड पर लिखे इंग्लीश वाक्यों को रूक–रूक कर जोड़–जोड़ कर पढ रही है तभी दर्शकों में यह जिज्ञासा बन जाती है

कि यह क्या है ।

फिल्म का विषय साधारण है, परंतु काफी संवेदनशील है, ग्रामीण भागों मे अंग्रेजी भाषा न जाननेवाले बहुत होते हैं, या यूँ कह लें कि भारत में लगभग ६० से ७० प्रतिशत लोग अंग्रेजी नही बोल सकते. या अंग्रेजी नही जानते, गौरी शिंदे ने मध्यम वर्गीय परिवार की साधारण स्त्री की कहानी इस मुव्ही मे ली है, जो शहर की है । उसका पति सतिश गोडबोले एक मल्टिनॅशनल कंपनी में काम करता है, सपना और सागर दो बच्चे है जो अंग्रेजी माध्यम स्कूल में पढते हैं, घर में सास है । मिसेस शशी सतिश गोडबोले सुंदर–सुशील गृहिणी है, वह अपने घरेलू सारे कर्तव्य को बखूबी निभाती है, वह मिठाई (लड्डू) बनाने मे माहिर है, वह लड्डू बनाने का छोटासा काम घरसे करती है, इससे उसको थेडीसी आर्थिक सहायता होती है । शशी प्रतिभावन है, सिर्फ वह अंग्रेजी बोलना, पढना, लिखना नही जानती । इसकी वजह से वह अपने पति और बच्चों द्वारा प्रताड़ित होती रहती है। सतिश को लोगो के सामने शशी का अंग्रेजी न बोल पाना सतिश के कंपनी के लोगोके सामने शशी का अंग्रेजी न बोल पाना सतीश को अपमान जनक लगता है ।

एक बार सतिश व्यस्त होने की वजह से स्कुल की पि.टी. मिटींग में शशी को जाना पडता है, वहा शशी टीचर के साथ अंग्रेजी नही बोल पाती ना ही टीचर की कही बातों को समझ पाती है। इससे सपना शशी पर अपनी मॉ पर खासी नाराज हो जाती है । वह अपनी जिन्दगी में मॉ का होना ही अपमान समझने लगती है, यहाँ शशी भी असमंजस में है। कि वह क्या करे? पति और बच्चों को कैसे समझाए ? वह मिठाई बनाने में माहिर है, उसकी मिठाई की लोग काफी तारीफ करते हैं, उसे शादी के लिए मिठाई बनाने के बढ़े–बढ़े ऑर्डर मिलने लगते है । परंतु घर में उसकी इस प्रतिभा का कोई मान नही है । शशी का जीवन इसी उधेडबुन में बीत रहा होता है ।

तभी उसकी बहन जो युएस मे रहती है, उसकी बेटी राधा की शादी तय होती है, और बहन को राशी की काफी जरूरत होती है । वह शशी को और पूरे परिवार को युएस बुलाती है, सब लोग चार महिने युएस में रहने का और शादी अटेंन्ड करने का प्लॅान बनाते है, परंतु सतिश को ऑफिस के जरूरी काम की वजह से टूर पोस्टफोन करना पडता है । इधर बच्चों के स्कूल में भी छुट्टी की दिक्कत आती है । ऐसे में शशी को अब अकेले ही युएस जाने के लिए यात्रा करनी पडती है। शशी बहुत घबराई हुई है, परंतु बहन की मदत करने के लिए उसे तो जाना ही पड़ेगा । घरवाले भी उसे हिम्मत बंधाते है । एअरपोर्ट पर जब तुम्हे कारण पूछा जायेंगा की तुम यहा किसलिए आई हो तो कहना I am here for attend my sister's Daughter's marriage" इस तरह अंग्रेजी वाक्य उसे रटाया जाता है । वह जब अपनी यात्रा शुरू करती है तो अंग्रेजी न पढ पाने की वजह से कई दिक्कतों का सामना उसे यात्रा के दौरान करना पडता है । वह युएस एयरपोर्ट पर पहॅुचती है उसे वाक्य तो पता है, परंतु आत्मविश्वास की कमी के कारण वह घबरा जाती है । जैसे तैसे वह बहन के घर पहॅुचती है । घर पर बहन और बहन की बेटियाँ ही हिन्दी बोलती है, पूरे यु.एस में उसे और कोई हिन्दी बोलनेवाला नही मिलता घर पर आनेवाले मेहमान अंग्रेजी में वार्तालाप करते हैं। शशी कुछ भी नही समझ पाती परंतु शशी को वहा शादी तक तो रूकना ही है ।

एक दिन वह अपनी बहन की छोटी बेटी के साथ बाहर कुछ काम से जाती है । एक जगह पर आकर बहन की बेटी कहती है ''मासी आप यही बैठे रहो मैं कॉलेज का काम निपटा कर आती हूँ'। यहा से हिलना मत कही जाना मत । शशी को भी डर लगता है, क्योंकि अंग्रेजी न बोल पाने और पढ पाने की वजह से वहीं कहीं नही जा सकती वह बाहर पूरी तरह से निर्भर है । बहन की बेटी को आने में काफी वक्त लग जाता है, शशी को प्यास लगती है, वह हिम्मत करके सामने के रेस्टारेन्ट मे पहॅुच जाती है, परंतु वहाँ कुछ समझ मे न आने की वजह से वह बहुत परेशान

हो जाती है, वहा उपस्थित लोग भी उसपर हमला बोल देते है । वह घबराई हुई बाहर आती है, रोने लगती है, तभी बहन की छोटी बेटी वहाँ पर पहुँच जाती है । मासी को इस हालात में देखकर मासी को समझाने लगती है। शशी युएस में बस से ट्रॅव्हल करते वक्त इंग्लीस स्पीकींग क्लॉस का बोर्ड पढती है और फोन नंबर भी लिख लेती है। शशी के जीवन के इन घटनाओं से खासकर सपना उसकी बेटी के बर्ताव की वजह से वह मन बना लेती है कि वह अंग्रेजी सिखेंगी। वह इंग्लीश स्पीकींग क्लॉस को फोन करके टायपिंग और फीस की जानकारी प्राप्त करती है । उसने मिठाई बेच कर जो पैसे इकठ्ठे किए होते है । उससे वह स्पीकींग क्लॉस की फीस भरती है । क्लॉस के पत्ते को अच्छी तरह से लिख लेती है । वहाँ जानेवाली बसेस के बारे में जानकारी हासिल कर लेती है । वह अपनी स्पिकींग क्लॉसेस के बाबत किसी से कुछ नहीं कहती सिर्फ बहन की छोटी बेटी को ही इसके बारे में पता होता है वह इस काम में अपनी मासी की मदत भी करती है । फिल्म में श्रीदेवी का स्पिकींग क्लॉस का सफर काफी रोचक दिखाया गया है । इस घटनामें फ्रेंच, जापनीस, चायनिस भी किस तरह से अंग्रेजी भाषा के अभाव से सफर कर रहे है इसका भी चित्रण स्पष्ट रूप से किया गया है । शशी होनहार है वह अपने स्वभाव से क्लॉस मे सबका दिल जीत लेती है वह अपनी कुकींग हुनर से भी सबका दिल जीत लेती है। वह अपनी पढाई पूरी लगन और इमानदारी से करती है। उसे पता चलता है कि भाषा के लिए व्याकरण कितना आवश्यक है । शशी की वजह से यह भी पता चलता है की जरूरी नही कि आप किसी बढी Multinational Company मे काम कर रहे हो, या कही जॉब कर रहे हो तो ही आपको अंग्रेजी सीखना चाहिए या अंग्रेजी आना चाहिए यह भाषा अंर्तेराष्ट्रीय स्तर पर आपको जोड सकती है । इसे हर किसी ने सीखना चाहिए ।

शशी का आत्मविश्वास बढता है । शादी के दिन करीब आते है, शशी के बच्चे और पति भी युएस में आते है, अब उसे अपने स्पीकींग क्लॉस के संघर्ष से ज्यादा जुझना पडता है । वह शादी की तैयारियाँ मे लगी होती है, उसके बच्चे मेहमानो से या यु.एस के उनके उम्र के बच्चों के साथ बात करते है । और उस समय शशी वहा आ जाए तो वह अपने दोस्तो के सामने अपनी मॉ का अपमान करते है ।She doesn’t know English लेकिन अब शशी अंग्रेजी समझने लगी है वह इन अपमानों को अनदेखा करती है और अपने काम व्यस्त रहती है । यहा इंग्लीश क्लॉस का टेस्ट सर पर है, सबको क्लॉस मे अपने जीवन की किसी घटना के बारे मे इंग्लीश में बोलना है शशी किसी कारणवंश उस दिन क्लॉस नही जा पाती । शशी के क्लॉस के लोग शादी में शामिल होते है । शादी में सभी परिवार जनों को नए शादीशुदा जोडे को आर्शीवाद स्वरूप कुछ कहना होता है । जब शशी की बारी आती है तो उसका पति सतिश कहता है “my wife cant speak English’ और शशी से कहता है, तुम हिन्दी में बोलो मै Translate करूँगा । शशी खडी होती है और अपना स्पिच इंग्लीश मे देती है और यहा जीत होती है, उस होनहार घरेलू औरत की जिसे सिर्फ अंग्रेजी भाषा न आने के कारण प्रताडित किया जाता था। निष्कर्ष – भाषा का ज्ञान जरूरी है, क्योंकि यही भाषा हमें विश्व से जोड़े रहती है । मगर किसी को भाषा न बोल पाने की वजह से प्रताडित नही करना चाहिए। Aim – इस विषय की गंभीरता को समझना और इसकी तकनिक का गंभीरता से अभ्यास करना Hypothesis - English Vinglish इस फिल्म द्वारा दिया गया मेसेज समाज तक पहुँचा है । इंग्लीश भाषा का ज्ञान इस समय की आवश्यकता है ।

संदर्भ :–

१. इंटरनेट २. इंटरव्युव
३. फिल्म – इंग्लीश विंग्लीश

Rules & Conditions

1) The journal welcomes articles and other writing materials mainly related to Music, Art & Literature.

2) Stories, Poems, Short Literary Pieces, Proverbs, Anecdotes of good taste may be sent.

3) Articles and writing materials may be sent in Hindi, English and Marathi.

4) Research Articles and other writing material will be published subject to their approval and selection by Editorial Board of the Journal.

5) All submissions should be typed in MS-Word, "KRUTI DEV 050' font should be used and send it in Document as well as PDF format.

6) In all matters related to the publication of the articles and other material the decision of the Editorial Board of the Journal will be final.

:: Contact ::

Prof. Monali Masih

Cell : 9370971222

Mail ID : monalimasih@gmail.com